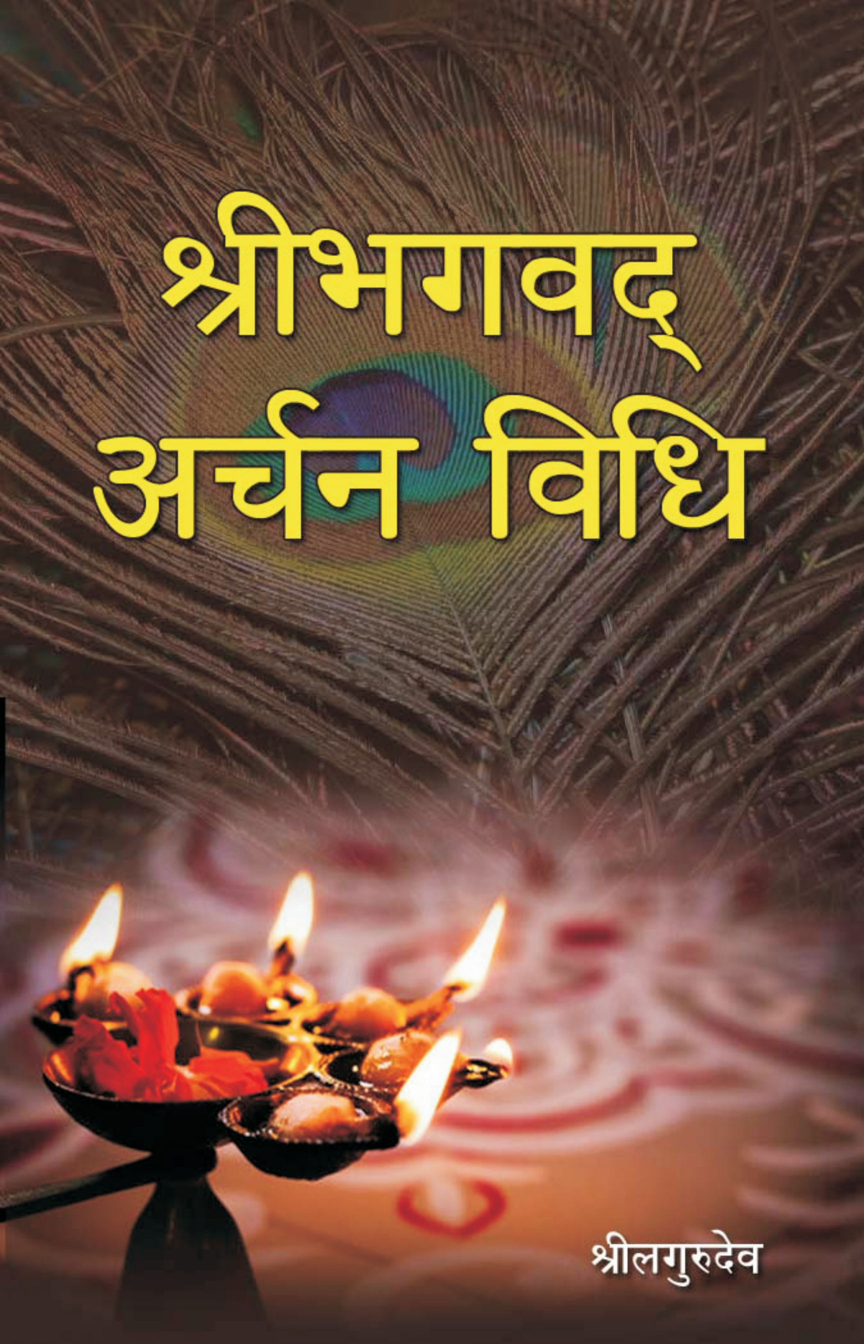

श्रीभगवद् अर्चन विधि

श्रीलगुरुदेव

श्रीलगुरुदेव

श्रीश्रीगुरु-गौरांगौ जयतः

जगद्गुरु श्रीलप्रभुपाद जी ने अपने उपदेशामृत में लिखा है कि "गृहस्थ भक्तों के लिए श्री विग्रह का अर्चन करना अत्यन्त आवश्यक है।" परन्तु मैं देखता हूँ कि कलियुग के प्रभाव के कारण बहुत से गृहस्थी भक्त श्री विग्रह का अर्चन तो दूर रहा "श्री विग्रह" का अर्थ भी नहीं जानते हैं। अतः मैं समझता हूँ कि प्रत्येक आस्तिक गृहस्थी व्यक्ति को ये छोटा सा ग्रन्थ अपने घर में श्रीमद भगवद्गीता व श्रीमद् भागवत की तरह रखना एवं पढ़ना चाहिए।

अखिल भारतीय श्रीचैतन्य गौड़ीय मठ प्रतिष्ठान के प्रतिष्ठाता नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रीमद् भक्ति दयित माधव गोस्वामी महाराज विष्णुपाद, जी के प्रियतम शिष्य त्रिदण्डि स्वामी श्री श्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज जी द्वारा सम्पादित एवं त्रिदण्डि स्वामी श्रीमद् भक्ति सर्वस्व निश्किंचन महाराज जी द्वारा हिन्दी अनुवादित।

निवेदन

श्री चैतन्य गौड़ीय मठ के प्रतिष्ठाता परम-पूज्य, गौड़ीय वैष्णवाचार्य-प्रवर, नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108 त्रिदण्डि स्वामी श्रीमद् भक्ति दयित माधव गोस्वामी महाराज जी की परम शुभानन्दायिनी आविर्भाव तिथि {श्री उत्थान एकादशी} के शुभ अवसर पर त्रिदण्डि स्वामी श्री श्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज जी की सम्पादकता में कलकत्ता मठ मुद्रालय {Press} से 'श्री भगवद्-अर्चन-विधि' नामक छोटा सा {बंगला} ग्रन्थ प्रकाशित हुआ था।

ग्रन्थ के प्रारम्भ में मंगलाचरण व

श्रीहरि-गुरु-वैष्णवों के पादपद्मों तथा श्रीधाम के चरणों में प्रणति-सूचक श्लोक दिये गये हैं। इसके बाद परमाराध्य जगद्गुरू श्रील प्रभुपाद नित्यलीला प्रविष्ट 108 श्री श्रीमद् भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामीजी की विचारधारा के अनुसार अर्चन की आवश्यकता, श्रीविग्रह तत्व, अर्चन तथा भजन की विशेषता, अधिकार निर्णय, श्रीचैतन्य मठ, श्रीगौड़ीय मठ तथा श्रीचैतन्य गौड़ीय मठ में श्री विग्रह सेवा प्रकाश, सेवापराध विचार एवं श्रीविष्णुजी के पंचागार्चन के कुछ प्रमुख विचार प्रसंग लिपिबद्ध किये गये हैं जो कि प्रत्येक दीक्षा प्राप्त व्यक्ति के लिए अवश्य जानने योग्य हैं। इनके इलावा अर्चन के प्रारम्भिक नित्यकृत्य पूजा के उपकरण तुलसी, पुष्पादि चयन विधि तथा पुष्पादि शुद्धि मन्त्र, भगवद् विग्रह का जागरण, मंगल आरती, भोग निवेदन की प्रणाली– प्रात:काल श्री विग्रह पूजा, श्रीगुरु-गौरांग एवं श्रीराधाकृष्ण जी की पूजा

पद्धति, श्री पुरुष सूक्त मन्त्र द्वारा सोलह प्रकार के उपचारों से भगवद्-पूजा एवं उपांग पूजा विधि दी गई है। इसके बाद दोपहर में होने वाली भोग-आरती का तरीका, श्री तुलसी सेवा, महाप्रसाद पाते समय करने योग्य कीर्तन तथा अपराह्न, सन्ध्या एवं रात्रि में भगवान की सेवा के लिए करणीय कुछ-कुछ अवश्य बातें संक्षेप में दी गई हैं। अन्त में पंचामृत शोधन मन्त्र तथा प्रयोग विधि दी गई है। इस प्रकार श्री विग्रह के अर्चन के सम्बन्ध में जानने योग्य प्रायः सभी विषय इस ग्रन्थ में संक्षेप रूप से दिये गये हैं।

सद्‌गुरु के पादपद्मों में दीक्षित प्रत्येक व्यक्ति के लिए अर्चन करनावश्यक है—ऐसा शास्त्रों में विशेष भाव से वर्णित है। सात्वत स्मृतिराज श्रीहरिभक्तिविलास के द्वितीय विलास में उद्धरित विष्णुयामल वाक्य में लिखा

है कि श्रीगुरूदेव अतन्द्रित {निरलस} होकर एक वर्ष तक शिष्य की परीक्षा करेंगे एवं उसे एक सौ चार विधि एवं निषेध सूचक नियम श्रवण कराऐंगे।

शालग्रामशिलापूजां बिना योऽश्नति किन्चन।
स चाण्डालादि विष्ठायामाकल्पम् जायते कृमिः।
{ह.भ.वि. 5/222}

अर्थात पद्मपुराण में लिखा है कि जो व्यक्ति शालग्राम की अर्चना किए बगैर भोजन करता है उसे बहुत लम्बे समय तक चाण्डालादियों की टट्टी का कीड़ा बनकर रहना पड़ता है।

स्कन्दपुराण में इस प्रकार कहा गया है

गोरवाचलशृंगाग्रभिद्यते तस्य वै तनुः।
न मतिर्जायते यस्य शालग्रामशिलार्चने।।
एवं श्रीभगवान् सर्वोः शालग्रामशिलात्मकः।

द्विजैः स्त्रीभिश्च शूद्रेश्च पूज्यो भगवतः परैः।।

{ ए 223 संख्या }

स्कन्द पुराण में लिखा है कि शालग्राम शिला के अर्चन में जिस व्यक्ति की रति मति नहीं होती, उस व्यक्ति को पहाड़ की चोटी से गिरा कर तड़फाया जाता है।

इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को चाहिए कि वह शास्त्र के विधानानुसार दीक्षा ग्रहण करके खूब श्रद्धा भक्ति के साथ भगवान का अर्चन करे। ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, स्त्री अथवा शूद्र दीक्षा के बाद सभी को शालग्राम रूपी भगवान का अर्चन करने का अधिकार है।

श्रीश्यामाचरण कविरत्न द्वारा सम्पादित श्रील सनातन गोस्वामी जी द्वारा कहे "भगवतः

परः" वाक्य की टीका में लिखते हैं कि–

"यथाविधि दीक्षां गृहीत्वा भगवत् पूजा परै सद्भिरित्यर्थः" अर्थात शास्त्र की विधि के अनुसार पूजा–परायण स्त्री, शूद्रादि कोई भी हो भगवद पूजा कर सकता है किन्तु हरिभक्तिविहीन होने से द्विज–जाति को भी उसमें अधिकार नहीं है–ये ही सत्शास्त्रों का अभिप्राय है।

बहुत से लोग पंचरात्रिकविधानानुयायी अर्चन एव भागवत् विधानानुयायी नाम–भजन–विचार वैशिष्ठ्य–समझन न पाने के कारण अर्चन पद्धति के प्रति अनादर प्रदान करते हैं इस विषय में श्रीजीव गोस्वामी जी श्रीमद् भागवत् के {7/5-23-24} श्लोक की कर्मसन्दर्भ की टीका का मर्म इस प्रकार से

लिखते हैं कि जब "हरिनाम इतना शक्तिशाली है कि श्रीहरिनाम से ही जीवों को भगवान का सुदुर्लभ, सुनिर्मल प्रेम प्राप्त हो सकता है"– तो अल्प सामर्थ्य वान मन्त्रदि दीक्षा ग्रहण करने की क्या जरूरत है? इसके उत्तर में वे स्वयं ही लिखते हैं कि– ये ठीक है कि हरिनाम के द्वारा ही सुदुर्लभ भगवान का प्रेम प्राप्त हो सकता है तथा स्वरूपतः अर्थात वस्तुतः मन्त्रादि दीक्षा ग्रहण करने की कोई आवश्यकता नहीं है तब भी स्वभावतः देहादिसंसर्गवशत कदर्यस्वभाव {घृणित स्वभाव} से विक्षित चित्त वाले जीवों की इन सब वृत्तियों को संकुचित करने के लिए ही महार्षि श्रीनारद आदि महाजनों ने शास्त्रों में कहीं-कहीं पर अर्चनमार्ग की विशेष मर्यादा {विधि व नियम} की स्थापना की है, जिनका उल्लंघन होने से पाप लगता है तथा जिनके प्रायश्चित का विधान भी शास्त्रों में उल्लिखित

किया गया है। अतएव महामन्त्र, श्रीनामदीक्षा एवं मन्त्रदीक्षा दोनों अनुष्ठान ही संगत हैं, उपयुक्त है।

–इति

वैष्णवदासानुदास त्रिदण्डि भिक्षु श्री श्रीमद्
भक्ति प्रमोद पुरी गोस्वामी महाराज जी
{सम्पादक संघपति "श्री चैतन्य वाणी"}

श्रीभगवद्-अर्चन विधि

विषय-सूची

मंगलाचरण	16
अर्चन की आवश्यकता	25
श्रीविग्रह तत्व	33
विग्रह-सेवा प्रकाश	37
अधिकार-निर्णय	38
अर्चन और भजन	41
सेवापराध-विचार	45
सेवापराध-समूह	45
वराह पुराण में अन्यान्य	48
जो सब अपराध कहे गये हैं।	
दस प्रकार के नामापराध	51
श्री विष्णु जी का पंचांगार्चन	52
अर्चन के प्रारम्भिक नित्यकृत्य-1	55
अर्चन के प्रारम्भिक नित्यकृत्य-2	62
अर्चन के प्रारम्भिक नित्यकृत्य-3	71
तन्मन्त्र	74

पूजोपकरणसमूह, तुलसी-पुष्पचयन विधि, पुष्पशुद्धि इत्यादि।	81
भगवद्-विग्रह को जगाना और मंगल आरती की विधि	87
भगवान को भोग निवेदन करने की विधि	93
पूर्वान्ह (प्रातः काल में) में श्री विग्रह पूजा	96
गुरु पूजा	110
श्री गौरांग पूजा	127
श्री श्रीराधा-कृष्ण जी की पूजा	140
उपांग पूजा	176
तुलसी सेवा	189
महाप्रसाद सम्मान-कालीन कीर्तन	191
अपरान्ह-कृत्य-	195
सन्धया कालीन कृत्य	196
रात्रि कृत्य-	196
पंचमत शोधन मन्त्र एवं प्रयोगविधि	197

मंगलाचरण

सपरिकर–श्रीहरि–गुरु–वैष्णव वन्दना

वन्देऽहं श्रीगुरुः श्रीयुतपदकमलं श्रीगुरून् वैष्णवांश्च
श्रीरूपं साग्रजातं सहगण–रघुनाथान्वितं तं सजीवम्।
सद्वैतं सावधूतं परिजनसहितं कृष्णचैतन्य–देवं
श्रीराधा–कृष्णपादान्
सहगण–ललिता–श्रीविशाखान्वितांश्च।।

श्रीगुरु–प्रणामः

अज्ञान–तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन–शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

श्रीगुरु–वन्दना

नामश्रेष्ठं मनुमपि शचीपुत्रमत्र स्वरूपं,
रूपं तस्याग्रजमुरुपुरीं माथुरीं गोष्ठवाटीम्।
राधाकुण्डं गिरिवरमहो ! राधिकामाधवाशां,
प्राप्तो यस्य प्रथितकृपया श्रीगुरुं तं नतोऽस्मि

श्रीलभक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज

नमः ॐ विष्णुपादाय श्रीगौरप्रियमूर्तये।
श्रीमते भक्तिवल्लभ-तीर्थ-गोस्वामिनामिने।
मायावाद विखण्डनं गुरार्वाण्यनुकीर्तनम्।
पश्चदेशोपदेशकं प्रसन्नवदनं सदा।।
शुद्ध-भक्ति प्रवाहकं शुद्ध-भक्ति-भगीरथम्।
भक्तिदयित माधवाभिन्न तनुं नमाम्यहम्।।
नामसंकीर्तनामृत रसास्वादविधायकम्।
कृष्णाम्नायकृपामूर्ति आचार्यं तं नमाम्यहम।
गौर-नाम प्रचारर्दे भक्तसेवानुकांक्षिणम्।
सतीर्थ्यप्रीतिसद्भावं नौमि तीर्थ महाशयम्।।

श्रीलभक्ति दयित माधव गोस्वामी महाराज

नमः ॐ विष्णुपादाय रूपानुग प्रियाय च।
श्रीमते भक्ति दयित माधवस्वामी-नामिने।।
कृष्णाभिन्न-प्रकाश-श्रीमूर्तये दीनतारिणे।
क्षमागुणवताराय गुरवे प्रभवे नमः।।
सतीर्थ प्रीति सदधर्म गुरु प्रीति प्रदर्शिने।
ईशोद्यान - प्रभावस्य प्रकाशकाय ते नमः।।
श्रीक्षेत्रे प्रभुपादस्य स्थानोद्धार सुकीर्तये।
सारस्वत गणानन्द सम्वर्धनाय ते नमः।।

श्रील प्रभुपाद–प्रणाम

नमः ॐ विष्णुपादाय कृष्ण–प्रेष्ठाय भूतले।
श्रीमते भक्तिसिद्धान्त–सरस्वतीति–नामिने।।
श्रीवार्षभानवीदेवी–दयिताय कृपाब्धये।
कृष्ण–सम्बन्ध–विज्ञान–दायिने प्रभवे नमः।।
माधुर्य्योज्जवल–प्रेमाढ्य–श्रीरूपानुग–भक्तिद।
श्रीगौर–करुणा–शक्ति–विग्रहाय नमोऽस्तुते।।
नमस्ते गौर–वाणी–श्रीमूर्त्तये दीन–तारिणे।
रूपानुग–विरुद्धापसिद्धान्त–ध्वान्त–हारिणे।।

श्रीलगौरकिशोर–प्रणाम मन्त्र

नमो गौरकिशोराय साक्षाद्वैराग्य–मूर्त्तये।
विप्रलम्भ–रसाम्भोधे! पादाम्बुजायते ते नमः।।

श्रीलभक्तिविनोद–प्रणाम मन्त्र

नमो भक्तिविनोदाय सच्चिदानन्द–नामिने।
गौरशक्ति–स्वरूपाय रूपानुगवराय ते।।

श्रीलजगन्नाथदास बाबाजी–प्रणाम मन्त्र

गौराविर्भाव–भूमेस्त्वं निर्देष्टा सज्जन–प्रियः।
वैष्णव–सार्वभौम–श्रीजगन्नाथाय ते नमः।।

श्रीवैष्णव-प्रणाम

वाञ्छा-कल्पतरुभ्यश्च कृपा-सिन्धुभ्य एव च।
पतितनां पावनेभ्यो वैष्णवेभ्यो नमो नमः।।

श्रीगौरांगमहाप्रभु-प्रणाम

नमो महावदन्याय कृष्णप्रेमप्रदाय ते।
कृष्णाय 'कृष्णचैतन्य'-नाम्ने गौरत्विषे नमः।।

श्रीनित्यानन्द-प्रणाम

संकर्षणः कारणतोयशायी गर्भोदशायी च पयोब्धिशायी।
शेषश्च यस्यांशकलाः स नित्यानन्दारव्यारामः शरणं ममास्तु।।

श्रीअद्वैत-प्रणाम

महाविषणुर्जगत्कर्त्ता मायया यः सृजत्यदः।
तस्यावतार एवायमद्वैताचार्य ईश्वरः।।
अद्वैतं हरिणाद्वैताचार्यं भक्तिशंसनात्।
भक्तावतारमीशं तमद्वैताचार्यमाश्रये।।

श्रीगदाधर-प्रणाम

श्रीह्लादिनी - स्वरूपाय गौरांग-सुहृदे सते।
भक्तशक्ति-स्वरूपाय गदाधर! नमोऽस्तु।।

श्रीवास-प्रणाम

श्रीवास-पण्डितं नौमि गौरांग-प्रियपार्षदम्।
यस्य कृपा-लवेनापि गौरांगे जायते रतिः।।

श्रीपंचतत्त्व-प्रणाम

पंचतत्त्वात्मकं कृष्णं भक्तरूप-स्वरूपकम्।
भक्तावतारं भक्ताख्यं नमामि भक्तशक्तिकम्।।

श्रीबलदेव-प्रणाम

नमस्ते तु हलग्राम! नमस्ते मुषलायुध।
नमस्ते रेवतीकान्त! नमस्ते भक्त-वत्सल।।
नमस्ते बलिनां श्रेष्ठ! नमस्ते धरणीधर।
प्रलम्बारे! नमस्ते तु त्राहि मां कृष्ण-पूर्वज।।

प्रार्थना

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गो-ब्रह्मण हिताय च।
जगद्-हिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः।।

श्रीजगन्नाथदेव-प्रणाम

भुजे सव्ये वेणुं शिरसि शिखिपिच्छं कटितटे।
दुकूलं नेत्रान्ते सहचर-कटाक्षं च विद्धते।।
सदा श्रीमद्वृन्दावन-वसति-लीला-परिचयो।
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे।।
महाम्भोधेस्तीरे कनकरुचिरे नीलशिखरे।
वसन् प्रासादान्तः सहज-बलभद्रेण वलिना।।
सुभद्रा - मध्यस्थः सकल-सुर-सेवावसरदो।
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे।।

श्रीकृष्ण-प्रणाम

हे कृष्ण करुणा-सिन्धो दीनबन्धो जगत्पते!
गोपेश गोपिकाकान्त राधाकान्त! नमोऽस्तु ते।।

श्रीसम्बन्धधिदेव-प्रणाम

जयतां सुरतौ पंगोर्मम मन्द-मतेर्गती।
मत्सर्वस्व-पदाम्भोजौ राधा-मदनमोहनौ।।

श्रीअभिधेयाधिदेव-प्रणाम

दीव्यद्-वृन्दारण्य-कल्पद्रुमाधः
श्रीमद्रत्नागार-सिंहासनस्थौ।
श्रीश्रीराधा-श्रील-गोविन्ददेवौ,
प्रेष्ठालीभिः सेव्यमानौ स्मरामि।।

श्रीप्रयोजनाधिदेव-प्रणाम

श्रीमान् रासर-सारम्भी वंशीवट-तटस्थितः।
कर्षण् वेणु-स्वनैर्गोपीर्गोपीनाथः श्रियेऽस्तु नः।।

श्रीराधा-प्रणाम

तप्तकाञ्चनगौरांगि! राधे! वृन्दावनेश्वरि!
वृषभानुसुते! देवी! प्रणमामि हरिप्रिये!।।

श्रीतुलसी–प्रणाम

वृन्दायै तुलसी–देव्य प्रियायै केशवस्य च।
कृष्णभक्ति–प्रदे देवि सत्यवत्यै नमो नमः।।

श्रीनृसिंह देव की स्तुति

इतो नृसिंह परतो नृसिंह यतो यतो यामि ततो नृसिंह।
बहिर्नृ सिंहो हृदये नृसिंहो नृसिंहमादि शरण प्रपद्ये।।
नमस्ते नृसिंहाय प्रह्लादाह्लाद–दायिने।
हिरण्य कशिपोर्वक्ष : शिलाटक–नरवालये।।
वागीशा यस्य वदने लक्ष्मीर्यस्य च वक्षसि ।
यस्यास्ते हृदये संवित् तं नृसिमहं भजे ।।
श्रीनृसिंह जय नृसिंह जय जय नृसिंह ।
प्रह्लादेश जय–पद्मामुखपद्मभृंग ।।

श्री क्षेत्रपाल–शिव प्रणाम

वृन्दावनावनिपते जय सोम सोम मौले।
सनन्दन–सनातन नारदेडय
गोपीश्वर व्रजविलासियुगांघ्रि–पद्म
प्रीतिं प्रयच्छ नितरां निरुपाधिाका मे।।

श्रीनवद्वीपधाम वन्दना

श्रुतिश्च्छान्दोग्यरव्या वदति परमं ब्रह्मपुरकं
स्मृतिर्वैकुण्ठारव्यां वदति किल यद्विष्णुसदनम् ।।
सितद्वीपन्चान्ये विरलरसिकोहयं ब्रजवनम्
नवद्वीपं वन्दे परम-सुखदं तम् चिदूदितम् ।।

श्रीधाममायापुर वन्दना

भूमिर्यत्र सुकोमला बहुविघप्रद्योति रत्नच्छटा
नानाचित्र मनोहरं खगमृगादद्याश्चर्यरागान्वितम्।
बल्लीभूरुहजातयोऽद्भुततमा यत्र प्रसूजतादिभि
स्तन्मे गौरकिशोर-केलि-भवनं मायापुरं जीवनम्।।

पञ्चतत्व

श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु-नित्यानन्द।
श्रीअद्वैत गदाधर श्रीवासादि-गौरभक्तवृन्द।।

कलियुग का महामन्त्र

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

अर्चन की आवश्यकता

कृष्ण मन्त्र हैते हबे संसार मोचन।
कृष्णनाम हैते पाबे कृष्णेर चरण।।
नाम बिना कलिकाले नाहि आर धर्म।
सर्वमन्त्र सार नाम एइ शास्त्र मर्म।।
एत बलि एक श्लोक शिखाइल मोरे।
कण्ठे करि एइ श्लोक करिह विचारे।।

(चै. च. आ. 7/73-75)

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामेव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा।।

(वृहन्नारदीय पुराण 38/126)

श्री श्रील भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाकुर ऊपर लिखे विषय पर आलोचना करते हुए लिखते हैं कि-सत्य, त्रेता और द्वापर इन तीनों युगों में श्रौत पथ का आदर था, परन्तु इस युग में कलिकाल की प्रवृति के साथ-साथ अनेकों अश्रौत व तर्कपन्थ उत्पन्न हो गये हैं। ऐसे लोगों के मत का आधार नाशवान व सीमित इन्दिय-जनित ज्ञान है, जबकि वास्तव वस्तु (भगवान) असीम व इन्द्रियातीत हैं।

यही कारण है कि इन लोगों का असीम वस्तु के अवरोहण के विषय में सन्देह युक्त होना श्रुति विरोधी हो पड़ता है। कृष्ण-नाम वैकुण्ठ वस्तु है। इसलिए, वह वास्तव-वस्तु 'श्रीकृष्ण' से सम्पूर्णतया अभिन्न है, अर्थात वैकुण्ठ वस्तु 'कृष्ण नाम' और वास्तव वस्तु "श्रीकृष्ण" में कुछ भी अन्तर नहीं है। वास्तव वस्तु श्रीकृष्ण जिस प्रकार से नित्य, शुद्ध पूर्ण, मुक्त, चैतन्य रस के विग्रह एवं अप्राकृत चिन्तामणि हैं-वैकुण्ठ वस्तु "कृष्ण नाम" भी नित्य, शुद्ध, पूर्ण, मुक्त, चैतन्य रस का विग्रह व अप्राकृत चिन्तामणि हैं। इस हरिनाम में तर्कपंथी लोगों का कोई अधिकार नहीं है। एक मात्र हरिनाम के भजन से ही स्थूल व सूक्ष्म उपाधियाँ विनष्ट होती हैं।

वैकुण्ठ वस्तु हरिनाम ही सांसारिक भोग चिन्तायों से पीडित जीवों को परित्रण करने में समर्थ है, इसलिए, हरिनाम को सर्वमन्त्र सार भी कहते हैं। जड़ीय वस्तु के नाम, रूप, गुण, भाव व क्रिया तर्क-पथ के अधीन हैं; परन्तु वैकुण्ठ नाम इस प्रकार नहीं है। वैकुण्ठ नाम के अप्राकृत नाम, रूप,

गुण, लीला व परिकर वैशिष्ट्य 'अद्वयज्ञान' में अवस्थित है। मायावादी लोग अपने इन्द्रिय-जन्य ज्ञान के द्वारा भगवान के नाम, रूप, गुण लीलाआदि को भो मायिक समझते हैं और अध: पतित होते हैं।

मायावादी लोगों के उपदेष्टा लोग 'सदेव सोम्येदमग्र आसीत' तथा 'सर्व खल्विदं ब्रह्म' इत्यादि महावाक्यों के द्वारा अपने अनुगत जनों को प्राकृत बन्धनों से मुक्त कराते हैं; परन्तु शुद्ध हरिनामाश्रय रहित व्यक्ति (नामापराधी व्यक्ति) इन्द्रियाधीन भोगमय तर्क-पथ से कभी भी छुटकारा नहीं पा सकते।

श्रील भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपाद जी वृहन्नारदीय पुराण के ('हरेर्नाम-हरेर्नाम-----गतिरन्यथा'।)-श्लोक की व्याख्या करते हुए लिखते हैं कि सत्ययुग में ध्यान के द्वारा जो गति प्राप्त होती थी, कलियुग में ध्यान के द्वारा वह गति प्राप्त नहीं हो सकती। कलियुग में वह

गति निश्चित रुप से केवल हरिनाम के द्वारा ही होगी; त्रेतायुग में जीवों को यज्ञेश्वर के यजन (यज्ञ) के द्वारा जो गति प्राप्त होती कलियुग में वह गति केवल मात्र हरिनाम के द्वारा ही हो सकती है-यज्ञ के द्वारा नहीं। द्वापर युग में जीवों को अचर्न के द्वारा जो गति लाभ होती थी, वह गति निश्चित रूप से हरिनाम से ही लाभ होगी-कलियुग में अचर्न के द्वारा कदापि नहीं। विशेषतः अन्य सभी उपायों के निरर्थक होने के कारण कलियुग में केवल मात्र हरिनाम को छोड़कर अन्य उपायों के द्वारा कोई भी शुभ गति नहीं होगी।

एक कृष्णनामे करे सर्व पाप क्षय।
नवविधा भक्ति पूर्ण नाम हैते हय।
*दीक्षा-पुरश्चर्या-विधि अपेक्षा ना करे।
जिह्वा-स्पर्श आ-चण्डाले सबारे उद्धारे।

(चै. च. म. 15/107-108)

*दीक्षा–

दिव्यं ज्ञानं यतो दद्यात कुय्यात पापस्य संक्षयम,
तस्माद् दीक्षेति सा प्रोक्ता देशिकेस्तत्व कोविदैः।।

(भक्ति सन्दर्भ 283 संख्या का धृत अगम वाक्य)

अर्थ– जिससे अप्राकृत ज्ञान उदय होता है एवं पाप जड़ से खत्म हो जाता है, तत्वशास्त्रविद पंडित लोग उसे दीक्षा कहते हैं........

पुरश्चर्या–अथवा पुरश्चरण

पूजा त्रैकालिकी नित्यं जपस्तपणमेवच
होमो–ब्राह्मणभूत्तिश्च पुरश्चरणमूच्यते।।
गुरोर्लब्धास्य मन्त्रस्य प्रसादेन यथाविधि।
पंचोपासना सिद्धै पुरश्चेतद्विधीयते।"

(हरिभक्तिविलासधृत अगस्तस्य संहिता वचन)

प्रातः, मध्यान्ह और सन्ध्यान्ह-इन तीनों कालों में नित्य पूजा, नित्य जप, नित्य तर्पण, नित्यहोम और नित्यब्राह्मण भोजन-इन पांच अंगों को पुरश्चरण कहते हैं। गुरुजी की कृपा प्राप्त मन्त्र की सिद्धि के लिए सर्वप्रथम पंचोपासना का विधान है, इसीलिए इसे पुरश्चरण कहते हैं।

नामापराधों को छोड़कर. शुद्ध कृष्ण नाम का आश्रय लेने से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। यहाँ तक कि जीव की पाप-पुण्य रूप सांसारिक भोग वासनाएँ भी विनष्ट हो जाती हैं। श्रीहरिनाम ग्रहण करने वाला व्यक्ति ही सब जीवों में श्रेष्ठ एवं पूज्य है। श्री नाम भजन से ही नवधा भक्ति पूर्ण हो जाती है। सारे मन्त्र भगवन्नामात्मक ही होते हैं। विशेषतः वे नमः आदि शब्दों के द्वारा अलंकृत हैं। भगवान तथा ऋषियों द्वारा समर्पित (संचरित) विशेष शक्तियुक्त होने के कारण ये मन्त्र श्रीभगवान के साथ अपने (जीव के) विशेष सम्बन्ध को उदित कराने वाले होते हैं। इनमें भी

केवल भगवान के नाम समूह ही अन्य निरपेक्ष भाव से परम पुरुषार्थ (भगवद-प्रेम) को प्रदान करवाते हैं।

अतएव स्पष्ट है कि मन्त्रों की महिमा भगवान के नामों से अधिक नहीं है तथापि भगवन्नाम ग्रहण कारी व्यक्ति को मन्त्र दीक्षा ग्रहण करने की आवश्यकता होती है, क्यों ?

उत्तरः-स्वरूपतः जीवों को दीक्षा की अपेक्षा नहीं होती तथापि देह सम्बन्ध वशतः सदाचार विहीन व विक्षिप्त मन वाले व्यक्तियों के लिए उनकी उन-उन दुष्प्रवृतियों को कम करने के लिए हमारे ऋषियों व महापुरुषों ने अर्चन मार्ग द्वारा किसी-किसी स्थान पर कुछ-कुछ मर्यादाएँ स्थापित की हैं।

इनका उल्लंघन करने से पाप लगता है व उक्त पाप से मुक्त होने के लिए शास्त्रों में वर्णित प्रायश्चित भी करना पड़ता है। इसीलिए मन्त्रों से, हरिनाम की महिमा अधिक होने पर भी हरिनाम

ग्रहणकारी को मन्त्रदीक्षा की आवश्यकता होती है।

श्रीचैतन्य महाप्रभु जी द्वारा उपदेशित पांच प्रकार के मुख्य भक्ति अंगों में श्रद्धा के साथ श्रीमूर्ति की सेवा भी एक अंग है। श्रीमद्भागवत् में वर्णित नवधा भक्ति अंगों के अन्तर्गत अर्चन भक्ति भी एक है। कलियुग में 'श्रीहरिनाम संकीर्तन' इस युग का युगधर्म होने पर भी इसमें अन्यान्य भक्ति अंगों का साधन निषिद्ध नहीं है। श्रीजीव गोस्वामी जी भक्त सन्दर्भ ग्रन्थ में इसी सन्देह को दूर करने के लिए लिखते हैं कि यदि कलिकाल में कीर्तन भक्ति के अतिरिक्त अन्यान्य भक्ति साधनों का अनुष्ठान करना हो तो उन्हें भी कीर्तन भक्ति के सहयोग से ही करना चाहिए।

"यद्यप्यन्या भक्ति कलौ कर्तव्या,
तदा कीर्तनाख्य-भक्ति-संयोगेनैव।"

श्रीविग्रह तत्व

सनातनधर्मावलम्बी लोग श्रीविग्रह की सेवा करते हैं वे पुतला-पूजक (खिलौना पूजक) नहीं होते। सर्वशक्तिमान भगवान भक्त की इच्छा पूर्ति के लिए जिस किसी स्थान में, जिस किसी समय तथा जिस किसी मूर्ति से सर्वशक्ति लेकर प्रकट हो सकते हैं। भगवान के असंख्य अवतारों में से छः प्रकार के अवतार मुख्य हैं-युगावतार, लीलावतार, पुरुषावतार, मन्वन्तरावतार, गुणावतार एवं शक्त्यावेषवतार। इनके अतिरिक्त भगवान का एक और विशेष करुणामय अवतार भो होता है जिसे अर्चावतार कहते हैं।

मनुष्य कर्ता बनकर अपनी कल्पना द्वारा जिसे तैयार करते हैं, वह पुतला कहलाता है। परन्तु सर्वशक्तिमान भगवान भक्तों को दर्शन व सेवा प्रदान करने के लिए गुरु वष्णव, पुरोहित व भास्कर* को सेवा-सुरोग प्रदान करते हुए उन्हें अवलम्बन

करके जब आविभूत होते हैं तो भगवान के इस अर्चावतार को 'श्री विग्रह' गहते हैं'।

"प्रतिमा न हो तुमि साक्षात व्रजेन्द्रनन्दन"

(महाप्रभु जी की वाणी)

अर्थात आप प्रतिमा नहीं हो, आप साक्षात वजेन्द्र नन्दन श्रीकृष्ण हो। भक्त लोग इस अनुभूति को लेकर ही श्री विग्रह की आराधना करते हैं।

श्रीमद् भागवत् में आठ प्रकार की प्रतिमाओं का वर्णन पाया जाता है :

शैली, दारुमयी, लौही, लेप्या, लेख्या च सैकती मनोमयी, मणिमयी, प्रतिमाष्टविधा स्मृता।

शैली	पत्थर की बनी
दारुमयी	लकड़ी की बनी
लौही	धातु की बनी
लेप्या	मिट्टी और चन्दनादि की बनी हुई
लेख्या	चित्रमयी
सेकती	बालुकामयी

मनोमयी — मानसिक चिन्तन द्वारा बनी मूर्ति

मणिमयी — मणियों द्वारा निर्मित

शास्त्रों में कहते हैं कि भगवान के श्री विग्रह में पत्थर बुद्धि करना एक महान अपराध है। जो मनुष्य इस प्रकार का अपराध करत हैं उन्हें नरक की यातनायों मे धकेल दिया जाता है।

प्रमाणः –

अर्चे विष्णो शिलार्धिगुरुषु नवमति वैष्णवे
जातिबुद्धिविर्ष्णोवा वैष्णवानाम् कलिमलमथने
पादतीर्थऽम्बुबुद्धिः।
श्री विष्णोर्नामी मन्त्रे सकल कलुषहे शब्द
सामान्यबुद्धिविष्णोसर्वेश्वरेशे तदितर समधीर्यस्य वा
नारकी सः।। {पद्म पुराण}

अर्थात– जो व्यक्ति अर्चाविग्रह में पत्थर बुद्धि, गुरु में (शद्धुभक्त गुरु में) मनुष्य बुद्धि, वैष्णवों में जाति बुद्धि, कलिकल्मषनाशक श्रीविष्णु और वैष्णवों के

पादोदक (चरणामृत) में साधारण जल बुद्धि, सब अमंगलों को नाश करने वाले श्री विष्णु के नाम और मन्त्र में सामान्य शब्द बुद्धि एवं जो परमेश्वर विष्णु में अन्य-अन्य देवताओं के बराबर बुद्धि करते हैं ऐसे व्यक्ति नारकी होते हैं अर्थात ऐसे व्यक्तियों की अन्तिम गति नर्क ही होती है।

श्रीचैतन्यमठ-श्रीगौड़ीयमठ-श्रीचैतन्य गौड़ीयमठ में विग्रह-सेवा प्रकाश

गृहस्थ लोगों के लिए श्रीविग्रह का अर्चन अत्यन्त आवश्यक है। किन्तु कलियुग के प्रभाव के कारण लोगों में श्रीविग्रह-पूजा के प्रति आग्रह नहीं रहा। आजकल पूजा करने वालों में सदाचार भी नही देखा जाता तथा अधिकतर लोग पूजा की विधि के बारे में भी अनभिज्ञ हैं। दूसरी ओर त्यागी लोगों के लिए विग्रह-अर्चन जरुरी नहीं है तथापि मठ-समूह श्रीमन् महाप्रभु जी की प्रेम-भक्ति की वाणी के प्रचार-केन्द्र होने के कारण वहां के आश्रित साधकों के कल्याण के लिए मठ में भी श्रीविग्रह सेवा की आवश्यकता महसूस हुई। इसीलिए, श्रील प्रभुपाद जी ने तथा उनके अनुगत आचार्य गणों ने शुद्ध-प्राचार सम्मत विग्रह सेवा करने का प्रशिक्षण देने के लिए मठ समूहों में त्यागी लोगों के द्वारा विग्रह सेवा का प्रवर्तन किया।

अधिकार-निर्णय

शुद्ध वैष्णवों से विष्णु मन्त्र में दीक्षित व्यक्ति ही विष्णु पूजा के अधिकारी हैं।

प्रमाणः -

"यथा कान्चनतां याति कांस्यां रस विधानतः।
तथा दीक्षाविधानेन द्विजत्वं जायते नृणाम् ।।

(तत्वसोगर)

अर्थात जिस प्रकार रासायनिक क्रिया से कांसा सोना बन जाता है, उसी प्रकार दीक्षा से मनुष्य मात्र ही, चाहे वह जिस किसी वर्ण का व्यक्ति क्यों न हो, द्विजत्व को प्राप्त होता है। श्री सनातन गोस्वामी जी ने भी ऊपर लिखे श्लोक की टीका में लिखा है कि इस श्लोक में 'नृणाम' शब्द से समस्त दीक्षित मनुष्यों को तथा 'द्विजत्वां' शब्द से विप्रता अर्थात ब्राह्मणता को इंगित किय गया है।

सद्गुरु (शुद्धभक्त) द्वारा दीक्षित एवं

भक्ति सदाचार युक्त किसी भी वर्ण का व्यक्ति वैष्णव हो जाने पर श्रीविग्रह-अर्चन का अधिकारी हो जाता है। जहां शुद्ध वैष्णवता हैं, वहां ब्राह्मणता तो होगी ही ब्राह्मण में सत्वगुण प्रधान होता है परन्तु वैष्णवता निर्गुण अर्थात माया से अतीत होती है ।

शुद्ध वैष्णव से विष्णु मन्त्र में दीक्षिता, शुद्धभक्ति-सदाचार में सम्पन्न, स्त्री जाति भी न केवल श्रीविग्रह के अर्चन की बल्कि श्री शालग्राम-शिला की पूजा की भी अधिकारी हो जाती है। जैसा कि स्कन्द पुराण में भी लिखा है

एवं श्रीभगवान् सर्वैः शालग्रामशिलात्मकः
द्विजै स्त्रीभिश्च शद्रेश्च भगवतः परैः।।
ब्राह्मण-क्षत्रिय-विशां सच्छूद्राणामथापि वा।
शालग्रामेहधिकारोहस्ति न चान्योषां कदाचन।।"

स्कन्ध पुराण

अतएव शास्त्र के नियम के अनुसार दीक्षा ग्रहण पूर्वक ब्राह्मण, स्त्री, शूद्र सभी शालग्राम-शिला रूपी श्रीभगवान की पूजा कर सकते हैं।

ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य इन सभी का श्रीशालग्राम की सेवा में अधिकार है। 'शूद्र' 'सत-शूद्र होने से उसका भी अधिकार है, औरों का कोई अधिकार नहीं है। 'सत-शूद्र' शब्द का अर्थ है–विष्णुभक्ति परायण शूद्र। अन्य सभी का, जो विष्णु भक्त नहीं है, शालग्राम शिला की पूजा में अधिकार नहीं है।

निष्कपटता पूर्वक तुच्छ भोगवासना का परित्याग कर उच्च स्वर से भगवान के पवित्र नामों का कीर्तन करना चाहिए। ऐसा करने से आपका मालिन चित्त साफ़हो जाएगा और आपके लिए भगवान की कृपा प्राति का रास्ता भी आसान हो जाएगा।

श्रील भक्ति दयित माधव गोस्वामी महाराज

अर्चन और भजन

सम्भ्रम के बोध के साथ, शास्त्र द्वारा प्रदर्शित मार्ग से के विविध उपचारों द्वारा श्रीविग्रह की सेवा का नाम 'अर्चन' है। कनिष्ठ-अधिकार में 'अर्चन' एवं उन्नत-अधिकार के समय 'भजन' होता है। स्थल एवं सूक्षम (दोनों) उपाधियों से मुक्त होकर अपने स्वरूप में अवस्थित व्यक्ति ही अधोक्षज (इन्द्रियों से अतीत) श्री भगवान की साक्षात सेवा में स्थित रह सकता है, यही शुद्ध और चिन्मय सेवा है इसी को 'भजन' भी कहते हैं।

स्थूल एवं सूक्ष्म देहों में आसक्त निम्नाधिकारी व्यक्तियों के लिए 'भजन' सम्भव नहीं है। उन लोगों के लिए अर्चन की व्यवस्था ही शास्त्रों में कही गयी है। शुद्ध भक्ति-माग में भी कनिष्ठाधिकार में अर्चन करने का विधान है।

श्रीमद्भागवत के सातवें सकन्ध के पांचवें

अध्याय के 24वें श्लोक की व्याख्या करते समय श्रील भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपाद जी ने गृहस्थ लोगों के लिए 'अर्चन' को अत्यावश्यक बतलाया है। इस प्रसग में उन्होंने इस प्रकार लिखा है कि जो गृहस्थ लोग सम्पति शाली हैं उनके लिए अर्चन मार्ग ही मुख्य रूप से करणीय है। यदि वे गृहस्थ लोग अर्चन न करके निष्किचन परमहंस भक्तों की तरह केवल स्मरण आदि विषयों में ही आसक्त रहेंगे तो उन्हें शास्त्र विधि के अनुसार 'वित्तशाठ्य' दोष लगता है। श्रील प्रभुपाद जी ने लिखा है कि दूसरों के द्वारा अर्थात वेतन भोगी पुजारी द्वारा श्रीमूर्ति की सेवा कराना अच्छा नहीं है, कारण ऐसा करना एक तो अपनी विषयासक्ति अथवा आलस्यता का परिचय देना है; दूसरा शुद्ध भाव विहीन एवं अश्रद्धायुक्त अर्चन को महाजनों ने निकृष्ट बतलाया है।

अर्चन के लिए आवश्यक वस्तुओं का संग्रह

करना एकमात्र गृहस्थियों के लिए ही आसान है। इसलिए उनके लिए कृष्णानुशीलन कार्य में 'नवधा भक्ति' के अन्तर्गत अर्चन मार्ग का ही मुख्य विधान है। अतएव अर्चन न करने से गृहस्थ लोगों को निश्चित रूप से महान दोष लगता है। यहां तक कि अर्चन न करने से दीक्षित व्यक्तियों का नरक पतन भी सुना जाता है।

शास्त्रों में अर्चन भी दो प्रकार का बतलाया गया है–

(1) शुद्ध अर्चन और

(2) कर्म मिश्र अर्चन

जो व्यक्ति निष्काम हैं तथा जिनकी भगवान में सुदृढ़ श्रद्धा है, उन व्यक्तियों के लिए शुद्ध अर्चन ही करणीय है। तथा–

व्यवहारिक और मनमुखी व्यक्तियों के लिए कर्ममिश्र अर्चन विहित है।

"श्रीअर्चन-पद्धति" में इस प्रकार लिखा है कि अर्चन में नाना उपकरण अथवा अनुष्ठानों के प्रयोजन का विधान होते हुए भी श्रीभगवत् मन्त्र का ही प्राधान्य है और मन्त्रों में भी उपास्य भगवान का नाम ही मुख्य वस्तु है। वास्तव में श्रीहरिनाम के द्वारा ही श्री विग्रह की पूजा होती है। इसलिए श्री भगवान का नाम-कीर्तन ही अर्चन का मुख्य अंग व प्राण है। अर्चन में भी कीर्तनाख्या (कीर्तन के द्वारा) भक्ति का ही प्रभुत्व है,

वस्तुतः कलिकाल में कीर्तनाख्या भक्ति के सहयोग के बिना अन्य किसी भी भक्ति अंग का अनुष्ठान विहित नहीं हैं। अन्य सब प्रकार की शास्त्रोक्त पूजाओं को अपेक्षा श्री नाम संकीर्तन ही सर्वश्रेष्ठ पूजा है।"

सेवापराध-विचार

हरिनाम भजन में जिस प्रकार अपराधों का विचार होता है, उसी प्रकार आगम में भी श्रीविग्रह-अर्चन के विषय में 32 प्रकार के सेवापराधों एवं वराह पुराण में और भी अनेक प्रकार के सेवापराधों की बातें लिखीं हैं। ठीक तरह से श्रीविग्रह-अर्चन करने के लिए सब अपराधों से मुक्त होना होगा।

सेवापराध-समूह

यान व पादुका के साथ श्रीमन्दिर में जाना।

भगवान के उत्सवों का अनुष्ठान न करना।

श्रीभगवद्विग्रह के सम्मुख प्रणाम न करना।

उच्छिष्ट व अशौच दशा में भगवान की वन्दना करना।

एक हाथ से प्रणाम करना।

श्रीभगवद्विग्रह के ठीक सम्मुख प्रदक्षिणा करना

अर्थात भगवद्-विग्रह की तरु पीठ करना ।

श्रीभगवद्विग्रह की तरफ पैर फैलाना।

श्रीभगवद्विग्रह के सम्मुख घुटने बांधकर बैठना।

श्रीभगवद्विग्रह के आगे सोना या लेटना।

श्रीभगवद्विग्रह के आगे भोजन करना।

श्रीभगवद्विग्रह के सामने जोर से बोलना।

श्रीभगवद्विग्रह के आगे झूठ बोलना।

श्रीभगवद्विग्रह के सामने ग्राम्यकथा घरेलू बातें करना।

श्रीभगवग्रिह के सामने रोना।

श्रीभगवद्विग्रह के सामने परस्पर कलह करना।

श्रीभगवद्विग्रह के सम्मुख किसी को पीटना।

श्रीभगवद्विग्रह के सम्मुख किसी को आशीर्वाद देना।

श्रीभगवद्विग्रह के सामने दूसरे के प्रति कटु भाषण करना।

श्रीभगवद्विग्रह की कम्बल ओढ़कर सेवा-पूजा करना।

श्रीभगवद्विग्रह के सामने दूसरे की निन्दा करना।

श्रीभगवद्विग्रह के सामने दूसरे की स्तुति (प्रशंसा) करना।

श्रीभगवद्विग्रह के सामने अश्लील बातें करना।

श्रीभगवद्विग्रह के सम्मुख अधोवायु त्याग करना।

समर्थ होते हुए भी सेवापूजा में सामान्य खर्च करना।

भगवान को भोग लगाए बिना भोजन करना।

श्रीभगवद्विग्रह को मौसम के नये फल भोग न देना।

संग्रहीत सामग्री का पहला भाग खा-पीकर अथवा किसी का देने के पश्चात बचे हुए हिस्से का भोग लगाना।

श्रीभगवद्विग्रह की तरफ पीठ देकर बैठना।

श्रीभगवद्विग्रह के सम्मुख दूसरे को प्रणाम करना।

गुरूपूजा में गुरूजी का स्तव परित्याग करना।

गुरूजी के सामने अपनी प्रशंसा करना।

अन्य देवी-देवताओं की निन्दा करना।

विष्णु-अर्चन मार्ग में ये प्रकार के अपराध हैं।

वराह पुराण में अन्यान्य जो सब अपराध कहे गये हैं, वे भी संक्षप में लिखे जा रहे हैं।

राजान्न भक्षण करना।

अंधेरे में भगवान के श्रीविग्रह को स्पर्श करना।

शास्त्र विधि को छोड़कर भगवद्-विग्रह का अर्चन करना।

शयन के बाद भगवान को जगाने के लिए चुपचाप (वाद्य रहित होकर) मन्दिर का दरवाजा खोलना।

कुत्ते आदि की नजरों में पड़ा नैवेद्य भोग लगाना।

पूजा के समय बातचीत करना।

पूजा के समय मल त्यागने जाना।

गन्ध-माल्यादि न देकर धूप देना।

निषिद्ध पुष्पों द्वारा पूजा करना।

दन्त-मंजन किये बिना भगवद् विग्रह का स्पर्श या सेवा करना।

स्त्री संभोग के पश्चात भगवद् विग्रह का स्पर्श या सेवा करना।

रजस्वला स्त्री को स्पर्श करके श्री भगवद्-विग्रह का स्पर्श या सेवा करना।

अनजाने व्यक्ति को स्पर्श करके भगवद् विग्रह का स्पर्श या सेवा करना।

शव को स्पर्श करके भगवद्-श्रीविग्रह को स्पर्श या सेवा करना।

लाल कपड़े पहन कर भगवद्-विग्रह की सेवा करना।

नीले कपड़े पहन कर भगवद्-विग्रह की सेवा करना।

बिना धुले वस्त्र पहन कर श्रीभगवद्-विग्रह की सेवा करना।

गन्दे कपड़े पहन कर भगवद्-विग्रह की सेवा करना।

दूसरों के कपड़े पहनकर भगवद्विग्रह की सेवा करना।

शव का दर्शन करने के बाद भगवद्-विग्रह की सेवा करना।

श्मशान में जाने के बाद भगवद्-विग्रह की सेवा करना।

भगवद्-विग्रह सेवा करते-करते क्रोध प्रकाशित करना।

अपान वायु परित्याग करके भगवद्-विग्रह की सेवा करना।

भोजन करने के एकदम पश्चात् श्री भगवद्-विग्रह की सेवा करना।

कुसुम्भ (नाटाकरन्चा) खाकर श्री विग्रह की सेवा करना।

हींग खाकर श्रीविग्रह की सेवा करना।

शरीर में तेल-मालिश के पश्चात श्रीहरि के विग्रह को स्पर्श करने या उनके ही किसी अर्चन का कार्य करने से पाप लगता है।

दस प्रकार के नामापराध

साधुनिन्दा।

शिवादि देववृन्द में श्रीकृष्ण से पृथक ईश्वर बुद्धि रखना।

श्रुति-शास्त्र निन्दा।

नाम में अर्थवाद।

नाम के बल पर पाप करना।

श्रद्धाहीन व्यक्मि को नाम का उपदेश करना।

अन्य शुभ कर्मों के साथ नाम की बराबरी करना।

गरू-अवज्ञा।

दूसरी तरफ में ध्यान देकर नाम लेना।

नाम की महिमा श्रवण करने पर भी 'मैं' और 'मेरी' रूप देहात्मबुद्धि से युक्त होकर हरिनाम में प्रीति या अनुराग न करना।

श्री विष्णु जी का पंचांगार्चन

अभिगमन, उपादान, योग, स्वाधयाय और इज्जा-अर्चन के पांच अंग कहलाते हैं।

अभिगमन–

अभिगमन का अर्थ होता है-सेवा-अर्थात श्रीमन्दिर मार्जन करना, उपलेपन, निर्माल्यदूरीकरण इत्यादि।

उपादान–

गन्ध, पुष्प, तुलसी इत्यादि श्रीविग्रह सेवा के उपकरणों को इकट्ठा करना।

योग–

भूतशुद्धि-जड़ीय देह, मन के अतीत शुद्ध चिन्मय स्वरुप अर्थात गोपीभर्ता-श्रीकृष्ण के दासों का दास-इस प्रकार की भावना।

स्वाध्याय–

साधारण अर्थ वेदाध्ययन, किन्तु यहां पर स्वाध्याय का आशय श्रीमद् भगवत, श्रीचैतन्य, चरितामृत तथा

शुद्ध भक्ति के अनुकूल शास्त्रादि के की आलोचना करने या अनुशीलन करने से है हरिनाम मन्त्र का चिन्तन पूर्वक जप व कीर्तन करना, सूक्त स्तोत्रादि पाठ करना व श्रीकृष्ण संकीर्तन करना-ये सभी क्रियाएं स्वाध्याय के अन्तर्गत आ जाती हैं।

ईज्या-

पूजा अर्थात अपने उपास्य देवता की नाना-प्रकार की सेवा करना।

श्रीविष्णु जी के अर्चन में या यज्ञ में, ब्राह्ममुर्हूत में, भगवान के जागरण के समय तथा मगंल-वन्दनादि से लेकर रात को शयन पुष्पान्जली तक सभी सेवा कार्य उपरोक्त पांचों अगों द्वारा निर्दिष्ट कर दिये गये हैं। पंचागं-अर्चन ही नित्य विशुद्ध अर्चन है। ये स्मार्त लोगों के जड़-कमों की तरह अनित्य नहीं है।

अरुणोदयकाल—

सूर्य उदय होने से 4 दण्ड (1 घंटा 36 मिनट) पूर्व से लेकर सूर्य उदय तक के समयान्तराल को 'अरुणोदय काल' कहते हैं।

ब्रह्मा-मुहूर्त-

अरुणोदय काल से दो दण्ड (48 मिनट) के पूर्व के समय से प्रारम्भ होकर अरुणोदय काल तक के समय को 'ब्रह्म-मुहूत' कहते हैं।

अर्चन के प्रारम्भिक नित्यकृत्य-1

श्रीविग्रह के अर्चन के समय, सन्ध्या एवं अन्हिक करते समय व श्रीमद् भागवत के पाठ आदि भगवद्-उपासनाओं से पहले श्री श्रीगुरुगौरांग जी का जय गान करना चाहिए। श्री श्रीगुरु गौरांग की कृपा को छोड़कर जीव को उनकी सेवा का अधिकार नहीं मिलता। 'जय' शब्द का अर्थ होता है-श्रीगुरु वैष्णव-भगवान हमें जय कर ले। इसीलिए ब्रह्ममुहूर्त में बिस्तर छोड़ने के बाद तथा उपासनादि से पहले श्री गुरु-वैष्णव व भगवान का जय गान करना भक्ति का विशेष अंग है, जय गान करने के बाद पंचतत्व और महामन्त्र का कीर्तन करना चाहिए। श्रीगुरु वैष्णव-भगवान का जय गान बारी-बारी से एक के बाद एक किस प्रकार करना चाहिए उसे नीचे दिया जाता है।

जय श्रीगुरु गौरांग गान्धर्विका-गिरधारी जी की जय।

जय श्रीश्री गुरु गौरांग-जय श्री
श्री-गुरु-गौरांग-
गान्धर्विका-गिरिधारी-राधा मदन मोहन -
पचतत्वात्मक श्री गौर हरि की जय।

जय श्रीचैतन्य गौड़ीय मठ के प्राक्तन आचार्य नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रील भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज जी की जय।

जय श्रीचैतन्य गौड़ीय मठ के प्रतिष्ठाता नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रील भक्ति दयित माधव गोस्वामी महाराज जी की जय।

जय श्रीचैतन्य मठ एवं गौड़ीय मठ के प्रतिष्ठाता नित्य लीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108 श्री-श्रीमद्

भक्ति सिद्धान सरस्वती गोस्वामी ठाकुर जी की जय।

जय परमहंस बाबाजी श्री श्रील गौरकिशोर दास गोस्वामी ज की जय।

जय श्री श्रील सच्चिदानन्द भक्ति विनोद ठाकुर जी की जय।

जय वैष्णव-सार्वभौम श्री श्रील जगन्नाथ दास बाबा जी महाराज जी की जय।

जय श्रीश्रील बलदेव विद्याभूषण प्रभु की जय।

जय श्री श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर की जय।

जय श्रीश्रील नरोत्तम ठाकुर महाशय की जय।

जय श्री श्रील श्यामानन्द प्रभु की जय।

जय श्री श्रील श्रीनिवासाचार्य प्रभु की जय।

जय श्री श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी प्रभु की जय।

जय श्री श्रील वृन्दावन दास ठाकुर महाशय की जय।

जय "श्री रुप, सनातन, भट्ट रघुनाथ।
श्री जीव, गोपाल भट्ट, दास रघुनाथ ।।"–
षड़-गोस्वामी प्रभु की जय।

जय श्री श्रील स्वरूप दामोदर प्रभु की जय।

जय श्रील राय रामानन्द प्रभु की जय।

जय "श्री कृष्ण चैतन्य, प्रभु नित्यानन्द।

श्री अद्वैत, गदाधर, श्रीवासादि गौर भक्त वृन्द–' की जय।

जय सपरिकर श्री श्रीराधामदनमोहन जी की जय।

जय सपरिकर श्री श्री राधागोविन्द जो की जय।

जय सपरिकर श्री श्रीराधा गोपीनाथ जी की जय।

जय अन्तर्वीप श्रीधाम मायापुर–सीमन्तद्वीप–गोद्र–मद्वीप–मध्यद्वीप –कोलद्वीप ऋतुद्वीप, जन्हुद्वीप–मोदद्रुमद्वीप–रूद्रद्वीपात्मक श्रीनवद्वीपधाम की जय।

जय श्री पुरुषोत्तम धाम की जय।

जय श्री बलदेव–श्री सुभद्रा एवं श्री जगन्नाथदेव जी की जय।

जय श्रील प्रभुपाद जो के आविर्भाव पीठ की जय।

जय द्वादशवन–यमुना–मथुरा–वृन्दावन–गोबर्द्धन–राधाकुण्डश्यामकुण्डात्मक श्रीब्रजमडल की जय।।

जय सर्व विघ्नविनाशनकारी श्रीनृसिंह देव की जय।

जय श्री प्रह्लाद महाराज की जय।

जय चारों धाम की जय।

जय चारों वैष्णव सम्प्रदाय की जय।

जय श्री क्षेत्रपाल शिव जी की जय।

जय श्री विश्ववैष्णव राज सभा की जय।

जय श्री माध्व-रामानुज विष्णुस्वामी-निम्बादित्य चारों वैष्णव प्राचार्यों की जय।

जय पाकर मठराज श्रीचैतन्य मठ एवं अन्य शाखा मठ समूह की जय।

जय श्रीधाम मायापुर ईशोद्यान स्थित मूल श्रीचैतन्य

गौड़ीय मठ एवं अन्यान्य शाखा मठ समूह की जय।

जय श्री हरिनाम संकीर्तन की जय।

अर्चन के प्रारम्भिक नित्य कृत्य-2

प्रस्तुत शीर्षक के इस भाग में भक्ति साधकों व साधारण जनता के लिए नित्य करणीय विषयों-जैसे दन्त धावन, तिलक सरंचना व स्नानादि करने की शास्त्र-अनुमोदित विधियां दी जा रही हैं, जो कि अर्चनकारी भक्ति साधकों के लिए अवश्य पालनीय है।

दन्त धावन करने की विधियाँ

भक्ति साधकों को चाहिए कि वे बिस्तर छोड़ने के बाद दोनों आंखों को धोकर, पवित्र एवं स्थिर चित्त से दन्त धावन करें।

दन्त धावन के सम्बन्ध में श्रीव्यास देव जी ने कहा है कि प्रतिपदा, अमावस्या, षष्ठी व नवमी तिथी को एवं रविवार को पत्तों से दाँत मांजने चाहियें, किन्तु अन्य दिनों में लकड़ी से दांत मांजने चाहिएँ

तथा प्रतिदिन लकड़ी से जीभ अवश्य साफ करनी चाहिए। श्रीव्यासदेव जी ने और भी लिखा है कि जिन-जिन तिथियों में दन्त-मंजन करना मना है उन तिथियों को पवित्र जल से बारह बार कुल्ला करना चाहिए। स्मृति शास्त्र में इस प्रकार लिखा है कि कांटे वाले वृक्ष की लकड़ी से दांत मांजना पवित्र होता है तथा दूध वाले वृक्ष की लकड़ी से दाँत मांजने से प्रायु बढ़ती है। कड़वे, तिक्त, कषाय व रस वाले वृक्ष की लकड़ी से दांत मांजने से बल की वृद्धि, रोगों से छुटकारा तथा सुख प्राप्त होता है। पुजारी व्रतवाले दिन भी दांत साफ कर सकता है। दक्षिण देशवासी वैष्णवों को व्रत के दिन पत्ते आदि के द्वारा दांत साफ करने चाहिए।

मलमूत्र त्याग एवं शौच विधि :

विष्णुपुराण में इस प्रकार लिखा है कि (विपत्तिकाल को छोड़कर) दिन में उत्तर की ओर मुंह करके व रात में पूर्व की ओर मुंह करके घास से

ढके भूतल पर मल इत्यादि त्याग करना चाहिए तथा उक्त स्थान पर अधिक समय नहीं बैठना चाहिए। मलमूत्र त्याग करते समय सिर कपड़े से ढका होना चाहिए। द्विजों को चाहिए कि वे उक्त समय यज्ञोपवीत को अपने दायें कान के ऊपर रख लें। पेशाब करने के बाद पानी अवश्य व्यवहार में लाना चाहिए। इनके इलावा खोदी हुई जमीन पर, अनाज के खेत में, गो-शाला में, जन समाज में, रास्तों में पवित्र नदियों में, पानी के बीच में, पानी की धारा में, श्मशान में अपनी परछाई पर, पेड़ की छाया में, तथा गाय, सूर्य, अग्नि, वायु, गुरु और ब्राह्मण की ओर मुह करके कभी भी मलमूल का त्याग न करें। मलत्याग करने के पश्चात मिट्टी और जल द्वारा शौच विधि का अवश्य पालन करना चाहिए।

स्नान के विधान व प्रकार :

हरिभक्तिविलास नामक ग्रन्थ में इस प्रकार विधान दिया है कि ब्रह्मचारी एक बार (यदि सम्भव

हो सके तो अरुणोदय के समय) स्नान करेंगे। गृहस्थ एवं वानप्रस्थ–दो बार अरुणोदय के समय व दोपहर में तथा सन्यासी तीन बार (अरुणोदय, दोपहर तथा सांयकाल में) स्नान करेंगे। त्रिसन्धया स्नान से अरुणोदय के समय स्नान करना सर्वोत्तम है। ऊपर लिखी व्यवस्था के अनुसार ये बात नहीं कि बीमार आदमी को भी स्नान करके और ज्यादा बीमार होना पड़ेगा।

शास्त्रों में असमर्थ लोगों के लिए मन्त्र स्नान आदि की भी व्यवस्था की गयी है। यदि कहीं पानी का अभाव हो तो एक बार स्नान करने से भी चलेगा। श्रीहरिभक्तिविलास में स्मृति के प्रमाणों का उल्लेख करके सात प्रकार के स्नानों का वर्णन है: –

1. वारुण–स्नान अर्थात नदी आदि के स्रोत में स्नान:
2. मान्त्र स्नान अर्थात स्मार्त लोगों के "शन्न आप:" इत्यादि मन्त्र एवं वैष्णव लोगों के मूल–मन्त्र आदि

के उच्चारण पूर्वक स्नानः

3. पार्थिव स्नान– मिट्टी के स्पर्श से स्नानः

4. आग्नेय स्नान–भस्म लेपन द्वारा स्नान :

5. वायव्य स्नान–गोधूलि द्वारा स्नानः

6. दिव्य स्नान–ऐसे समय पर जब धूप भी हो वर्षा भी हो रही हो, ऐसी वर्षा म स्नान करना :

7. मानस स्नान–मन–मन में विष्णु जी का ध्यान करने के मानस स्नान कहते हैं।

मानस स्नान ही सभी प्रकार के स्नानों में श्रेष्ठ है। गरुड़ पुराण में नारद जी की उक्ति तथा 'विष्णुधर्म' में पुलस्त्य ॠषि जी की उक्ति है :

"अपवित्र पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्यभ्यन्तरः शुचि।।

अर्थ–अपवित्र या पवित्र अर्थात जिस किसी अवस्था में में पुण्डरीकाक्ष (भगवान का नाम) को स्मरण करने से भगवन्नाम स्मरणकारी बाहर और

भीतर–दोनों प्रकार से शुद्ध हो जाते हैं।

स्नान के बाद गायत्री मन्त्र के साथ–साथ शिखा बन्धन करना कर्तव्य है, खुली शिखा अवस्था में कोई भी काम करन मना है। शिखा बन्धन के बाद ही आचमन व पूजा के अन्य–अन्य कार्य करने चाहिए।

स्नान के बाद पवित्र वस्त्र पहनने चाहिएँ। बिना धुले वस्त्र, धोबी के द्वारा धुले वस्त्र, मैले व गीले कपड़े व मलमूत्र के समय उपयोग किए गए वस्त्रों को श्रीविग्रह के अर्चन के समय पहनना निषेध है। गृहस्थ व्यक्तियों के लिए रंगीन वस्त्र अथवा कौपीन पहन कर श्रीविग्रह पूजा करना मना है। फटा, जला और जोड़ा हुआ कपड़ा एवं दूसरे का पहना हुआ कपड़ा भी अर्चन के समय पहनना मना है। वस्त्र अपवित्र होने से पानी से धोकर शुद्ध करने चाहिएँ। ऊनी वस्त्र वायु, सूर्य तथा अग्नि आदि की किरणों से

शुद्ध हो जाते हैं। भेड़ के बालों से से बने वस्त्र और कम्बल प्रत्येक अवस्था में ही शुद्ध माने जाते हैं। परन्तु इन कपड़ों को पहनकर श्रीविग्रह का अर्चन करना उचित नहीं है क्योंकि उससे वस्त्र के लोम (बाल) उड़कर सेवा में विघ्न उत्पन्न कर सकते हैं।

ऊर्ध्वपुन्ड्र या हरिमन्दिर (तिलक) बनाने का तरीका

यच्छशरीरं मनुष्याणामूर्ध्वपुन्ड्र बिना कृतम्।
दृष्टव्यं नैव तत्तावत् श्मशान सदृशं भवेत।।

ऊर्ध्वपुन्ड या हरिमन्दिर (तिलक) का चित्र

अर्थात् 'बिना ऊर्ध्वपुन्ड वाले मानव शरीर का दर्शन नहीं करना चाहिए क्योंकि वह श्मशान के समान होता है।" टेढ़ा ऊर्ध्वपुन्ड धारण नहीं करना चाहिए। वैष्णव लोग ऊर्ध्वपुन्ड को जगह त्रिपुन्ड्र न करें। वक्षःस्थल आदि पर पीपल के पत्ते की तरह, बांस के पत्ते की तरह व कमल फूल की कणिका की तरह तिलक नहीं करना चाहिए।

जो शीशे में अथवा जल में अपना प्रतिबिन्ब देखकर यत्न के साथ ऊर्ध्वपुन्ड्र निर्माण करते हैं, वे परमागति को प्राप्त करते हैं। दशांगुल प्रमाण का ऊर्ध्वपुन्ड्र अति उत्तम, नवांगुल प्रमाण को मध्यम व अष्टांगुल प्रमाण के ऊर्ध्वपुन्ड्र को निकृष्ट समझा जाता है। नाक के मूल से प्रारम्भ करके ललाट (कपाल) के अन्त तक मिट्टी लगनी चाहिए। नासिका के चार भागों में से तीन भागों को नासिका का मूल कहा जाता है। तिलक को दोनों भ्रूओं के मूल से प्रारम्भ करके (रेखांकित) करना चाहिए

जैसा कि पृष्ट 68 पर दिए गए चित्र में दिखाया गया है।

पद्मपुराण में कहते हैं कि नासिका से सिर के बालों तक विस्तृत, अतीव सुन्दर और बीच में छेद से युद्र-ऊर्ध्वपुन्ड्र को ही हरिमन्दिर समझना चाहिए। ऊर्ध्वपुन्ड्र के बायीं ओर ब्रह्मा, दक्षिण की ओर सदाशिव और बीच में हरि अधिष्ठित रहते हैं, इसलिए मध्य भाग में लेपन नहीं करना चाहिए।

अर्चन के प्रारम्भिक नित्य कृत्य-3

श्रीभगवद्-विग्रह अर्चनकारी व्यक्ति को चाहिए कि वह प्रातःकाल बिस्तर छोड़ने के बाद दन्त धावन करे, तत्पश्चात हाथ-पैर धोए उसके बाद यथारीति स्नान करे व रात को सोते समय व्यवहार किए कपड़ों को परित्याग करके धोए हुए पवित्र वस्त्र पहने। उसके बाद सन्धया वन्दनादि करे। सन्धया व आन्हिक करने के लिए अलग से एक आसन होना चाहिए। उस आसन पर दिन में पूर्व की ओर व रात में उत्तर की ओर मुख करके सन्धया-पूजा करनी चाहिए। दिन में उत्तर की ओर व रात में पूर्व की ओर मुख करके भी पूजा कर सकते हैं तथापि दिन में पूर्व की ओर व रात में उत्तर की ओर सन्धया, पूजा इत्यादि करना अच्छा है।

पवित्र तीर्थ के जल को छोड़कर किसी भी

जल से सन्ध्या या आचमन करना उचित नहीं है, हाँ, यदि तीर्थ जल न मिलता हो तो ऐसे समय पर पूजक को चाहिए कि वह पंचपात्र में रखे जल को मन्त्रों द्वारा पवित्र कर ले।

जल पवित्र करने की विधिः –

अपने दाहिने हाथ को उल्टा करके अर्थात हथेली को मुंह की ओर रखकर मध्यमा अंगुली के पिछले हिस्से को जल में स्पर्श करते हुए समस्त तीर्थों का नीचे लिखे मन्त्र द्वारा आवाहन करे–जैसा कि चित्र में दिखाया गया है : –

पंच–पात्र के जल को पवित्र करने का तरीका।

जल पवित्र करने हेतु मन्त्रः

गंगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती।
नर्मदे सिन्धो कावेरी जलेऽस्मिन सन्निधिं कुरू।।

पूजक को इस बात का हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि पंचपात्र के जल में नाखुनों का स्पर्श न हो, क्योंकि नाखुनों के द्वारा स्पर्शित जल को अपवित्र माना जाता है जो कि पूजा इत्यादि शुभ कार्यों में नहीं लगता।

मन्त्र पढ़ने के बाद बायें हाथ की हथेली में उसी जल में से थोड़ा सा जल लेकर उसमें गोपीचन्दन, उसके प्रभाव में तुलसी की मिट्टी घिसकर उससे केशवादि द्वादश मन्त्र से ललाटादि द्वादश अंगों में ऊर्ध्वपुन्ड (तिलक) या हरिमन्दिर की रचना करनी चाहिए।

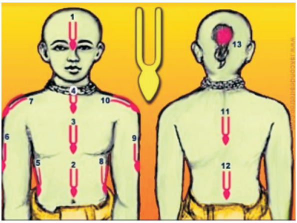

तन्मन्त्र

ललाटे, केशवं ध्यायेन्नारायणमथोदरे।
वक्षःस्थले माधवं तु, गोविन्दं कण्ठपके।
विष्णुं च दक्षिणे कुक्षौ, बाहौ च मधुसूदनम्।
त्रिविक्रम कन्धरे तु, वामनं वामपार्श्वके।।
श्रीधरं वाम बाहौ तु, हृषीकेशं च कन्धरे।
पृष्ठे तु पद्मनाभं च कट्या दामोदरं न्यसेत्।
तत्प्रक्षालनतोयं तु वासुदेवाय मूर्धनि।।

ललाट में	श्रीकेशवाय नमः।
उदर में	श्रीनारायणाय नमः।
वक्षःस्थल में	श्रीमाधवाय नमः।
कण्ठ में	श्रीगोविन्दाय नमः
दक्षिणकुक्षि में	श्रीविष्णवे नमः।
दक्षिणबाहु में	श्रीमधुसूदनाय नमः।
दक्षिणस्कन्ध में	श्रीत्रिविक्रमाय नमः।
वामकुक्षि में	श्रीवामनाय नमः।
वामबाहु में	श्रीधाराय नमः।
वामस्कन्ध में	श्रीहृषीकेशाय नमः।
पीठ में	श्रीद्मनाभाय नमः।
कटि में	श्रीदामोदराय नमः।

अन्त में बाएं हाथ में बचे हुए जल को "श्रीवासुदेवाय में नमः" कहकर मस्तक में लगाएँ। तिलक करने के बाद आचमन अवश्य करना चाहिए आचमन की विधि इस प्रकार है-पहले बायें हाथ से पंचपात्र की चम्मच को पकड़ें, उससे दाहिने हाथ की हथेली में जल डालकर उसे धो लें। इसके बाद :

1. श्रीकेशवाय नमः।

2. श्रीनारायणाय नमः।

3. श्रीमाधवाय नमः।

इन तीन मन्त्रों से तीन बार आचमन करें। आचमन के बाद- **"ॐ तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयो दिवीव चक्षुराततम्"- इस मन्त्र का पाठ करना चाहिए।

जिस प्रकार आकाश में नेत्र स्पष्ट रूप से किसी पदार्थ को देख पाते हैं उसी प्रकार अधोक्षज विष्णु जी के

परम पद् का देववृन्द व भक्तवृन्द हमेशा दर्शन करते हैं। यहां पर सेव्य, सेवक और सेवाय भजनीय, भजनकारी और भजन-इन तीनों का नित्यत्व प्रतिपादित हुआ है। अर्थात विष्णुपादपद्म नित्य हैं, उन्हें दर्शन करने वाले वैष्णव लोग भी नित्य हैं व दर्शन या भक्ति भी नित्य है। साधक ऋगवेद के इस मन्त्र को उच्चारण करते समय इसके अर्थ का चिन्तन व ध्यान करें।

इसके बाद श्री श्रीगुरू गौरांग-गान्धविका-गिरिधारी और तुलसीजी को प्रणाम करें। सबसे पहले श्रद्धा के साथ श्रीलगुरुदेव के स्मरण पूर्वक पंचतत्व का नाम कम से कम बारह बार कीर्तन करें।

पंचतत्व-'श्रीकृष्ण चौतन्य प्रभु नित्यानन्द।
श्री अद्वैत गदाधर श्रीवासादि गौर भक्त वृन्द।।

प्रणाम विधि- आगम में दो प्रकार के प्रणाम की

विधियां दी गयी हैं-साष्टांग और पंचांग।

साष्टांग प्रणाम– हाथ, पैर, दोनों घुटने, छाती, मस्तक, दृष्टि मन और वाक्य-इन अष्ट अवयवों द्वारा प्रणाम को 'साष्टांग' प्रणाम कहते हैं।

पँचांग प्रणाम– घुटने, बाहु, मस्तक, वाक्य और बुद्धि इन पांच अंगों के प्रणाम को 'पंचांग' प्रणाम कहते हैं। श्रीविष्णु को बायीं हाथ की ओर, शक्ति अकेले रहने पर उन्हें दायीं हाथ की ओर एवं गुरू वैष्णवों को सामने रखकर प्रणाम करने की विधि है।

श्रीहरिभवितविलास में नित्य कृत्य के सम्बन्ध में अर्चनकारी की शुद्धता के लिए इस प्रकार व्यवस्था दी गई है-ब्राह्ममुहूर्त में कृष्ण-कृष्ण कीर्तन करते हुए अर्चनकारी बिस्तर का परित्याग करे हाथ पैर धोए तथा दन्तमजन करे। इसके बाद आचमन पूर्वक रात को व्यवहार किये हुए बासी कपड़े त्याग करके अन्य वस्त्र पहनकर दो बार फिर

आचमन करे। इसके बाद परम पवित्र होने की इच्छा करते हुए श्रीगुरूदेव जी के पादपद्मों का ध्यान, उनका स्तव पाठ एवं श्रीकृष्ण कीर्तन व स्मरण करके निम्नलिखित चार श्लोकों का पाठ करें।

*जयति जननिवासो देवकी जन्मवादो
यदुवरपरिषत्स्वैर्दोभिरस्यन्न धर्मम्।
स्थिरचरवृजिनघ्नः सुस्मितश्रीमुखेन।
व्रजपुरवनितानां वर्धायन् कामदेवम्।।
स्मृते सकलकल्याणभाजनं यत्र जायते।
पुरुषस्तमजं नित्यं व्रजामि शरणं हरिम्।।
विदग्ध गोपालविलासिनीनां सम्भोगचिन्हांकित
सर्वगात्रं।
पवित्रमाम्नाय-गिरामगम्यं ब्रह्म प्रपद्य नवनीतचौरम्।।
उद्गायतीनामरविन्दलोचनं व्रजांगनानां
दिवमस्पृशद् ध्वनिः।
दघन्श्च निर्मन्थनशब्दमिश्रितो, निरस्यते
येन दिशायमंगलम्।

श्लोकों के भावार्थ-जो अन्तर्यामी रूप से सभी जीवों में अवस्थित हैं जिनके बारे में इस प्रकार कहा जाता

है कि इन्होंने देवकी के गर्भ से जन्म ग्रहण किया है-यदुवंशी लोग जिनकी सभा में-सेवक रूप से उपस्थित रहते हैं, जिन्होंने भुजबल से अधर्म का नाश किया य जो वृन्दावन में स्थित वृक्ष-गाय आदि का भी संसार क्लेश नाश करते हैं एवं जो मुस्कराहट युक्त श्रीमुख से ब्रजवनिताओं (गोपियों) के एवं पुरवासी नारियों के कामदेव को वर्द्धित करते हैं-इस प्रकार के श्रीकृष्ण जय युक्त हों। जिनको स्मरण करने से सब प्रकार का कल्याण हो सकता है, मैं उन्हीं अजन्मा-सनातन पुरुष श्रीहरि की शरण ग्रहण करता हूँ। जो पवित्र होते हुए भी श्रुतिवाक्यों के अगम्य हैं, परब्रह्म होते हुए भी जिनका सारा शरीर चतुर गोपियों के नाखुनों और दन्तों के द्वारा चिन्हित है- मैं उसी नवनीत चोर श्रीकृष्ण की शरण ग्रहण करता हूँ। दधि मन्थन के समयदधि के दण्ड के रड़कने से उत्पन्न होने वाली ध्वनि तथा दधि मन्थन करने वाली व्रजरमणियों के कण्ठों से निसृत श्रीकृष्ण के गुणगान की उच्च ध्वनि आपस में मिश्रित होकर

आकाश मंडल को स्पर्श कर रही है तथा सभी दिशाओं में रहने वाले प्राणियों के अशुभों का विनाश कर रही है।

भगवद्– उपासक पूर्व कथित विधि के अनुसार आचमन के बाद ऋग्वेद में कहे– 'ॐ तद् विष्णो परमं पद सदा पश्यन्ति सूरयो दिवीव चक्षुराततम– मन्त्र को अर्थ चिन्तन के सहित उच्चारण करे एवं उसके बाद गुरूजी द्वारा उपदेशित गायत्री मन्त्र का कम से कम बारह बार जप करे।

पूजोपकरणसमूह, तुलसी-पुष्पचयन विधि, पुष्पशुद्धि इत्यादि।

शास्त्रों में सोलह, बारह, दस अथवा पांच उपचारों से पूजा का विधान है,

सोलह प्रकार से उपचार :-

आसन, स्वागत, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, मधुपर्क (पुनराचमन), स्नान, वस्त्र, उपवीत, भूषण, गन्ध, पुष्प, धूप, दोप, नैवेद्य, (माल्य), नमस्कार।

बारह प्रकार से उपचार :-

आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, मधुपर्क, स्नान, वस्त्र, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य।

पांच प्रकार से उपचार :-

गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य।

अर्चन कारियों की जानकारी के लिए आवश्यक द्रव्यों

को तैयार करने की विधियां भी दी जाती हैं, जैसे-

1. गन्ध- चन्दन, कर्पूर, अगुरु (Scent) इन तीनों का एक विशेष परिमाण में बना मिश्रण गन्ध कहलाता है।

2. चतु:सम- चन्दन (4 भाग), कुमकुम (3 भाग), कस्तूरी 2 भाग), कर्पूर (1 भाग) का मिश्रण चतु:सम कहलाता है।

3. अर्घ्य- गन्ध, पुष्प और जल के द्वारा अर्घ्य तैयार किया जाता हैय परन्तु श्रीविष्णु तत्व के लिए अर्घ्य में गन्ध, पुष्प और जल के साथ तुलसी भी देनी पड़ती है।

अर्घ्य विशेष- जल, दूध, कुशाग्र, दहीं, अडुवा, चावल, तिल जौ तथा सफेद सरसों।

4. मधुपर्क- गाय का घी, गाय के दूध मे वनी दही, शहद-इन तीनों को बराबर मात्र में मिलाने पर बना

मिश्रण मधुपर्क कहलाता है। कोई-कोई कहता है कि मधुपर्क में इन तीनों द्रव्यों के साथ चीनी भी देनी पड़ती है।

5. पंचामृत- गाय का घी, बाय के दूध से बनी दही, गाय चीनी और शहद-इन पाँचो द्रव्यों से बने मिश्रण को पंचामृत कहते हैं ।

पंचामृत व मधुपर्क के लिए पात्र का चयन :

अर्चक को चाहिए कि जिस बर्तन में रखने से मधुपर्क व पंचामृत में विकृति आ जाये, उस बर्तन में न रखना हो अच्छा है। वसे चांदी अथवा पत्थर के बर्तन में रखना उचित है। अर्चन करते समय, उपरोक्त द्रव्यों में से किसी द्रव्य की कमी हो तो उस द्रव्य के अभाव में उक्त द्रव्य का मानसिक चिन्तन करके उसके बदले में फूल या तुलसी देकर पूजा हो सकती है यदि पुष्प व तुलसी का भी अभाव हो तो पवित्र जल से ही पूजा कर सकते हैं।

पूजा के लिए वर्जित पुष्पों के प्रकार :

सभी तरह के पुष्प भगवद् पूजा में प्रयोग नहीं किये जाते जिनमें सूखे हुए, दबे हुए, बासी, जमीन पर गिरे हुए, कीड़ों से युक्त, जिनके ऊपर बाल लगे हों, गन्ध हीन या दुर्गन्धयुक्त अथवा इन फूलों की कलियां शामिल हैं- इनफूलों से भगवद् पूजा करना उचित नहीं है। इसके इलावा, ऐसे फूल-जिन्हें- हाथ में लेकर प्रणाम किया हो, किसी के द्वारा सूंघे गये हों, अपवित्र द्रव्य से स्पर्श हो गये हों, श्मशान आदि अपवित्र स्थानों में उत्पन्न हुए, नाभि से नीचे पहने वस्त्र में (पैन्ट को जेब इत्यादि में) लाये गये पुष्प भी भगवद् सेवा में वर्जनीय हैं।

सुगन्ध युक्त सफेद फूलों द्वारा पूजा करना अच्छा है।

पुष्प-शुद्धि मन्त्र :

पुष्पे पुष्पे महांपुष्पे सुपुष्पे पुष्प सम्भवे।
पुष्पचयाकीर्णे च हूं फट् स्वाहा।।

श्री भगवान को प्रणाम करते हुए उनका आदेश लेकर तुलसी और पुष्प आदि विधि के अनुसार चयन करना कर्तव्य है। बिना स्नान किये तुलसी तोड़ना मना है। असमर्थ व्यक्ति को शुद्ध वस्त्र पहनकर मन्त्र स्नान पूर्वक पवित्र भाव से तुलसी व पुष्प चयन करना चाहिए। अपने लिये अर्थात दवाई इत्यादि के लिए तुलसी तोड़ना मना है। स्मृति शास्त्र के अनुसार संक्रान्ति, अमावस्या, पूणिमा, द्वादशी और रविवार को तुलसी तोड़ना मना होते हुए भी वैष्णवों के लिए सिर्फ द्वादशी को तुलसी चयन करना मना है। द्वादशी के लिए पहले से ही अर्थात एकादशी तिथि में तुलसी तोड़कर रख लेना चाहिए। इनके अतिरिक्त रात को व दोपहर में भी तुलसी तोड़ना मना है।

तुलसी चयन करते समय (तोड़ते समय) निम्न मन्त्र का उच्चारण व मन्त्र के अर्थ का स्मरण करना चाहिए।

मन्त्र -

तुलस्यमृत जन्मासि सदा त्वं केशवप्रिया।
केशवार्थे चिनोमि त्वां वरदा भव शोभने।।

(स्कन्द पुराण)

भगवद्-विग्रह को जगाना और मंगल आरती की विधि

गर्व मन्दिर के बाहर दरवाजे पर खड़े होकर श्रुति स्तव (भागवत) का पाठ करते हुए घन्टा बजाते हुए श्री भगवान को जगाना चाहिए अथवा निम्नलिखित मन्त्र द्वारा भगवान के जागरण के लिए प्रार्थना करनी चाहिए।

सोऽसावदभ्रकरुणो भगवान विवृद,
प्रेममितेन नयनाम्बुरुहं विजृम्भन्।
उत्थाय विश्वविजयाय च नो विषांद।
माध्व्या गिरापनयतात्पुरुषः पुराणः।।
देव प्रपन्नार्तिहर प्रसादं कुरू केशव।
अवलोकन दानेन भूयो माम् पालयाच्युत।।

अर्थ-आप अपार करुणामय पुराण पुरुष हैं। आप परम प्रेममयी मुस्कान के सहित अपने नेत्र खोलिए और शेष शैय्या से उठकर विश्व के उद्भव के लिए अपनी सुमधुर वाणी से मेरा विषाद दूर कीजिए।

हे देव! हे शरणागतों के दुखों को हरने वाले! हे केशव! मेरे प्रति अपनी कृपा का प्रकाश करें। हे अच्युत! आप दुबारा दर्शन देकर मुझे पवित्र करें।

पुष्कर पुराण में भी भगवान को जगाने के लिए मन्त्र दिया गया है; जो इस प्रकार है-

उत्तिष्ठोतिष्ठ गोविन्द त्यज निद्रां जगतपेत।।
त्वयी सुप्ते जगन्नाथे जगत् सुप्तं भवेदिदम।।
उत्थिते चेष्टते सर्वभूत्तिष्ठोत्तिष्ठ माधव।।
जय जय कृपामय जगतेर नाथ।
सर्वजगतेरे करो शुभ कृष्टिपात।।

ऊपर लिखे स्तव को पाठ करने के बाद तीन बार ताली देकर श्रीमन्दिर के अन्दर प्रवेश करना चाहिए। उसके बाद भगवान की सुन्दर स्तुति अथवा विष्णु-सहस्रनाम का पाठ करते हुए तुलसी को छोड़कर भगवान को अर्पित माला इत्यादि सब उतार

देें। तत्पश्चात श्रीकृष्ण के श्रीहस्त, श्रीचरण व श्रीमुख मण्डल को धोने के लिए जल पात्र तथा दन्त काष्ठ एवं जिह्वा-मार्जनी अर्पण करें। कुछ समय पश्चात पुनः जल और मुख साफ करने के लिए सुन्दर गमछा प्रदान करके तुलसी अर्पण कर।

इसके बाद श्रीविग्रह को यथोचित मुकुट व वंशी पहनाकर श्रीकृष्ण के प्रिय श्लोक आदि का पाठ करें तथा महावाद्य ध्वनि के साथ, हरि-संकीर्तन करते हुए जगत का मंगल करने वाली मंगल आरती करें। तत्पश्चात श्रीकृष्ण को मूल मन्त्र के साथ तीन बार पुष्पान्जली प्रदान करें तथा क्रमानुसार 1 धूप, 2 दीप, 3 पानी युक्त शंख, 4 वस्त्र, 5 पुष्प, 6 चामर-व्यजन आदि प्रदान करें एवं जाड़े के समय को छोड़कर अन्य समयों पर ताल के पत्र से से बने पंखे से हवा करें।

बासी फूल सेवा में नहीं लगते, इसलिए मंगल आरती में फूल नहीं दिए जाते। यदि पुष्पान्जली देनी

हो तो तुलसी और जल द्वारा दी जा सकती है। आरती करने से पहले प्रत्येक द्रव्य श्रीकृष्ण को मूलमन्त्र द्वारा निवेदन करना चाहिए। श्रीकृष्ण को निवेदन करने के बाद हाथ धोने चाहिए। जिस धूप को व्यव हार में लाया जाये, वह किसी प्राणी की हत्या से न बना हो, किन्तु कस्तूरी-युक्त धूप व्यवहार में लायी जा सकती है। धूप करते समय धूप का पात्र भगवान की नाभि के ऊपर उठाना मना है। आरती में दीप की संख्या तीन से कम नहीं होनी चाहिए, वे तीन, पांच या सात आदि की संख्याओं में होनी चाहिए। साधारणतया पंच-प्रदीप द्वारा ही आरती करनी चाहिए।

पंचप्रदीप घुमाने की विधि :

विष्णु जी के पाद् पद्म में चार बार, नाभि देश में दो बार, मुख मंडल में एक बार, (कोई-कोई तीन बार भी कहते हैं) सब अंगों में सात बार य कुल मिलाकर 14 बार प्रदीप को घुमाना चाहिए। दीप

आदि में गाय के दूध का बना घी सर्वोत्तम है, इसके अभाव में सरसों का तेल प्रयोग में ला सकते हैं। परन्तु चर्बी, मज्जा, हड्डी आदि से दीप दान सर्वथा निषिद्ध है।

सफेद रंग की बत्ती को छोड़कर रंगीन बत्ती का उपयोग नहीं करना चाहिए।

आरती के पश्चात पुजारी गर्भ मन्दिर से बाहर आकर तीन बार शंख धवनि करे तथा उसके बाद श्रीगुरू-गौरांग गान्धर्विका गिरिधारी जी की तथा अन्य-अन्य जय वान देना कर्तव्य है। जय ध्वनि के पश्चात श्री विग्रह के सामने साष्टांग दण्डवत प्रणाम करना चाहिए तथा चार बार श्रीमन्दिर की परिक्रमा करनी चाहिए। मंगल आरती व श्रीमन्दिर परिक्रमा के बाद भगवान को बाल्य भोग अर्पण करना चाहिए।

नोट-दोपहर में भोग आरती के समय व सन्ध्या

आरती के समय भी सभी कार्य मंगल आरती में होने वाले कार्यों की तरह करने चाहिए।

भगवान को भोग निवेदन करने की विधि

सबसे पहले श्रीकृष्ण को मूल मन्त्र के साथ भोग निवेदन करने के बाद, श्रीकृष्ण का प्रसाद श्री राधिका जी को 'श्री राधिकाय नमः' इस मन्त्र के साथ निवेदन करना चाहिए अथवा श्रीराधाकृष्ण को एक साथ 'श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः' इस मन्त्र से भी भोग निवेदन किया जा सकता हैं। श्री गुरूदेव जी को 'ऐं गुरुवे नमः' इस मन्त्र से और श्री गौर सुन्दर जो को 'क्लीं गौराय नमः' इस मन्त्र से निवेदन करना चाहिए। श्रीगुरुदेव को श्रीकृष्ण जी का प्रसाद, श्रीगौरांग जी का या श्रीराधाकृष्ण जी का प्रसाद निवेदन किया जाता है अथवा श्रील गुरुदेव अपने आराध्यदेव जी को भोग निवेदन करके प्रसाद पाएंगे; ऐसी भावना लेकर श्रीगुरुदेव जी को अनिवेदित द्रव्य भी निवेदित किया जा सकता है। मन्त्र उच्चारण व घण्टा ध्वनि के साथ, तुलसी पत्र के द्वारा शंख जल से प्रत्येक द्रव्य निवेदन करना

चाहिए। अर्चक भोग निवेदन के बाद बाहर आकर गौर मन्त्र, व गौर गायत्री जप करते हुए इष्ट देव के भोजन काल तक प्रतीक्षा करे। उसके बाद पुनः मन्दिर में प्रवेश करके मन्त्र के द्वारा आचमन के लिए जल व तत्पश्चात पान निवेदन करें। श्रीकृष्ण जी का प्रसाद श्रीराधिका, श्रीगुरुदेव, सर्व सखी, सर्व वैष्णव, श्रीपौर्णमासी और सभी ब्रजवासियों को निवेदन करना कर्तव्य है।

श्री श्रीराधा-कृष्ण जी को जिन मन्त्रों से भोग निवेदन करना चाहिए, वे निम्नलिखित हैं :

एष पुष्पांजलीः श्रीं क्लीं राधा कृष्णाभ्यां नमः।

इदमासनं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः।

(आसन में फूल इत्यादि देने चाहिए)

एतत् पाव्यं श्रीं क्ली राधाकृष्णाभ्यां नमः।

(जल विसर्जन पात्र में त्याग दें)

इदं आचमनीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः।

(जल विसर्जन पात्र में त्याग दें)

इदं मिष्ठान्न-पानीयादिकं बाल्पभोगं
श्रीं क्ली राधाकृष्णाभ्यां नमः
इदं आचमनीयम् श्रीं क्ली राधाकृष्णाभ्यां नमः।
इदं ताम्बूल श्रीं क्ली राधाकृष्णाभ्यां नमः।

भगवान जी के प्रसाद को राधा जी की सखियों, वैष्णवों, पौर्णमासी तथा व्रजवासियों को निवेदन हेतु प्रयोग होने वाले मन्त्र :

एष प्रसादः सर्वसखीभ्यो नमः।
एष प्रसादः सर्व वैष्णवेभ्यो नमः।
एष प्रसादः पौर्णमास्यै नमः।
एष प्रसादः सर्वब्रजवासिभ्यो नमः।

श्रीमन्दिर मार्जन :

बाल्यभोग के बाद श्रीकृष्ण संकीर्तन करते हुए, उनके दास्य भाव में गोबर, मिट्टी व पानी के साथ भगवन्मन्दिर मार्जन करना चाहिए। उसके बाद भगवद्-सेवा के पात्र एवं भगवान जी के वस्त्र एवं आसनादि साफ करने चाहिए।

पूर्वान्ह (प्रातः काल में) में
श्री विग्रह पूजा

प्रातः काल मन्दिर में प्रवेश करने के बाद पुजारी को चाहिए कि वह पूजा के उपयोगी आसन में बैठकर रोति सहित हरि-गुरू-वैष्णवों का गुणगान करे तथा "ॐ आधारशक्तये नमः" इस मन्त्र से आसन में पुष्प अर्पण करे। आसन में पुष्प देने के बाद पूजा करते हुए निम्नलिखित स्तव का पाठ कर।

स्तवः

ॐ आसन मंत्रस्य मेरुपृष्ठ ऋषिः सुतलं छन्दः
कूर्मदेवता आसनोपवेशने विनियोगः
पृथ्वी त्वयां धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।
त्वन्छ धारय माम् नित्यं पवित्रोमासनं कुरू।
ॐ आसन------विनियोगः।

भावार्थ-अर्चनकारी को चाहिए कि वह अपने आसन को बिछाते समय व आसन को पवित्र करने

की अभिलाषा से मन्त्र के ऋषी-मेरुपृष्ठ, मन्त्र के छन्दः सुतल व देवता कूर्म भगवान का स्मरण करे।

पृथ्वी त्वया------कूरू:।

हे पृथ्वी! आप सभी लोकों को धारण किये हुई हो, हे देवी! विष्ण पापको धारण करते हैं। आप नित्य मुझे धारण करो एवं इस आसन को पवित्र करो।

नारद-पंचरात्र में प्रासन के दोषगुण के सम्बन्ध में इस प्रकार वर्णित है कि बांस से बने आसन में बैठकर पूजा करने से दरिद्रता आती है, पत्थर से बने आसन में बैठ कर पूजा करने पर रोग उत्पन्न होते हैं, मिट्टी के आसन में बैठने से दु:खों की उत्पत्ति होती है, लकड़ी के आसन पर बैठने से दुर्भाग्य तथा तृण इत्यादि से बने आसन में बैठने से यश की हानि होती है, पत्ते के आसन पर बैठने से चित्त चंचल होता है और कुशा के आसन पर बैठने

से व्याधि नाश होती है एवं कम्बल के आसन पर बैठने से दुःखों का मोचन होता है अतः अर्चक को चाहिए कि वह पूजा के समय उपयुक्त आसन में पद्मासन अथवा स्वस्तिकासन करके बैठे।

वैष्णवों के लिए किसी प्रकार का भी चमड़े का आसन उपयोग करना उचित नहीं है।

पंचपात्र में जल स्थापन :

पंचपात्र अथवा कोशा (पानी डालने का बड़ा चम्मच) में जल स्थापन करने के लिए अर्चनकारी अपने सामने जमीन पर त्रिकोण मंडल अंकित करें तथा 'ॐ अस्त्राय फट' इस अस्त्र-मन्त्र से पंचपात्र को धोएं, 'ॐ आधारशक्तये नमः', इस आसन मन्त्र से त्रिकोण मंडल में प्रासन स्थापित करे, 'ॐ हृदयाय नमः' इस हृदय मन्त्र से पंचपात्र में गन्ध व पुष्प फेंकें। 'ॐ शिरसे स्वाहा' इस शिरो मन्त्र से पंचपात्र को पानी से भर दें, 'ॐ अं अर्कमण्डलाया नमः द्वादश

कमलात्मने नमः'–इस मन्त्र से गन्ध पुष्प द्वारा पंचपात्र के, ॐ सोममण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः' मन्त्र द्वारा पंचपात्र के पानी की पूजा करें। इसके बाद तीर्थ मन्त्र के द्वारा सभी तीर्थों का आहवाहन करें तथा जल स्पर्श और आच्छादन पूर्वक 8 बार मूलमन्त्र का जप करें।

शंख स्थापन–

अर्चक अपने सामने बायीं और भूमि पर त्रिकोण मंडल अंकित करके 'ॐ अस्त्रय फट" इस अस्त्र मन्त्र से त्रिपदी को धोकर 'ॐ आधारशक्तये नमः'–इस आसन मन्त्र से त्रिपदी को त्रिकोण मण्डल के ऊपर स्थापन करें 'ॐ अस्त्राय फट' मन्त्र से शंख को धोकर त्रिपदी के ऊपर स्थापन करें तथा उसके बाद 'ॐ हृदयाय नमः' इस हृदय मन्त्र से गन्ध–पुष्प और तुलसी को शंख के बीच में डाल दें। इसके बाद 'ॐ शिरसे स्वाहा'–इस शिरो मन्त्र से शरव को पानी

से भर दें तथा 'ॐ अं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः'-मन्त्र से गन्ध तथा पुष्प से त्रिपदी की पूजा करें, 'ॐ अं अर्कमण्डलाय द्वादश कमलात्मने नमः' मन्त्र से गन्ध, तुलसी तथा पुष्प से शंख की पूजा कर। एवं 'ॐ उं सोममण्डलाय षोड़शकलात्मने नमः' इस मन्त्र से गन्ध तुलसी व पुष्प से शंख में रखे पानी की पूजा करें। इसके बाद अंकुश मुद्रा द्वारा वंख के जल को स्पर्श व आच्छादन करके मूल मन्त्र का पाठ बार जप करे। शंख के कुछ जल से उपस्थित सभी को छींटा देकर, पुष्प व तुलसी द्वारा शंख के पानी से मूलमन्त्र पढ़ने के साथ-साथ अपने शरीर में तथा अपने मस्तक को तीन बार छींटा दें। इसके बाद शंख के पानी को विसर्जन पात्र में डालकर ॐ शिरसे स्वाहा' मन्त्र से दुबारा शंख को पानी से भरकर भगवान के सामने रख दें। इस प्रकार छींटा करने से अपना शरीर और सभी पूजा उपकरण विशेष भाव से शुद्ध हो जाते हैं।

घण्टा स्थापनः

अर्चनकारी अपने बाई पोर आधार के ऊपर घण्टा स्थापन करके 'ॐ जयध्वनि मन्त्रपात्रे स्वाहा' मन्त्र से गन्ध तथा पुष्प से घण्टा की पूजा करें।

घण्टा शुद्धि मन्त्र :

सर्ववाद्‌मयी घण्टे देव देवस्य वल्लभे।
त्वां बिना नैव सर्वेषां शुभं भवति शोमने।।

धूप दान मन्त्र :

वनस्पतिरसोत्पन्न गन्दाढ्यो गन्ध उत्तमः।
आघ्रेयः सर्वदेवानं धूपोयं प्रतिगृह्यताम्।।

दीप दान :

स्वप्रकाशो महातेजाः सर्वतस्तिमिरापहः।
स बाह्माभ्यन्तरज्योतिर्वीपयम् प्रतिगृह्यताम् ।।

इसके बाद 'ॐ नमः दीपेश्वराय' – इस मन्त्र से

दीप के ऊपर पुष्पांजलि अर्पण करें।

श्रीविष्णु स्मरण व मंगलशान्तिः

पूजा से पहले शास्त्र-सम्मत् श्रीविष्णु स्मरण व मंगल-शन्ति पाठ करें। श्रीविष्णु-स्मरण, जैसे-

1.

'(ॐ)"

यं ब्रह्म वेदान्तविदो वदन्तिपरे प्रधानं पुरुष तथाहन्ये।
विश्वोद्गतेः कारणमीश्वरं वा तस्मै नमो विघ्नविनाशाय।।

2

ॐ तदविष्णोः परमं पदम् सदा पश्यन्ति सूरया
दिवीव चक्षराततम् ॐ तद्विष्णोः परमं पदम्।

3.

ॐ माधवो माधवो वाचि, माधवो-माधवो हृदि।
स्मरन्ति साधवो सर्वे सर्वकार्येषु माधावम्।।

4.

ॐ कृष्णोंवै सच्चिदानन्दघनः, कृष्ण-आदि पुरुषः,
कृष्ण पुरुषोत्तमः कृष्णो हा उ कर्मादिमूलम, कृष्णः स ह
सर्वैकार्य कृष्णः काशंकृदादीशमुखप्रभु पूज्य,
कृष्णऽनादि तस्मिनजान्डान्तर्वाह्ये यत्
मगलं तत् लभते कृती।।4।। .

ॐ हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे।।

अर्थ-जिसे वेदान्त के विद्वान लोग 'ब्रह्म', और दूसरे लोग 'प्रधान', उसी प्रकार कोई-कोई 'पुरुष', तथा और कोई विश्वोत्तपत्ति का कारण ईश्वर कहते हैं, उसी विधन विनाशकारी को नमस्कार है। कृष्ण ही सचिदानन्दधन, कृष्ण ही आदि पुरुष, कृष्ण ही पुरुषोत्तम हैं कृष्ण ही कर्म प्रवृति के मूल हैं, कृष्ण सभी के एकमात्र प्रभु हैं, कृष्ण ही ब्रह्मा-विष्णु-शिवादि प्रमुख देवताओं के भी प्रभु हैं और पूज्य हैं, कृष्ण अनादि हैं ब्रह्माण्ड के अन्दर-बाहर जितने भी प्रकार के मंगल है-कृष्ण की सेवा करने वाले को वे समस्त मंगल कृष्ण की कृपा से सुगमता से प्राप्त होते हैं ।

मंगलशान्तिः

हाथ में कुमकुमाक्त व हरिद्राक्त* चावल

अथवा सगन्ध पुष्प लेकर पाठ करें–

ॐ स्वस्ति नो गोविन्दः स्वस्ति नोऽच्युतानन्तौ,
स्वस्ति नो वासुदेवो विष्णुर्दधातु।
स्वस्ति नो नारायणो नरो वै,
स्वस्ति नः पद्मनाभः पुरुषोत्तमो दधातु।
स्वस्ति नो विश्वक्सेनो विश्वेश्वरः,
स्वस्ति नो हृषीकेशो हरिर्दधातु,
स्वस्ति नो वैनतेयो हरिः ;
स्वस्ति नोऽन्जनासुतो हनुर्भागवतो दधातु।
स्वस्ति स्वस्ति सुमंगलैकेशो महान,
श्रीकृष्णः सच्चिदानन्दघनः सर्वेश्वरेश्वरो दधातु (1)
करोतु स्वस्ति मे कृष्ण सर्वलोकेश्वरेश्वरः।
कार्ष्णादयश्च कुर्वन्तु स्वस्ति मे लोक पावनाः (2)
कृष्णो ममैव सर्वत्र स्वस्ति कुर्यात् श्रियासमम्।
तथैव च सदा कार्ष्णिः सर्वविघ्नविनाशनः (3)
ॐ हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे।।

*कुमकुमाक्त व हरिद्राक्त चावल कुम्कुम व हल्दी से युक्त चावल अर्थात ऐसे चावल जिनमें कुम्कुम व हल्दी मिला रखी हो।

अर्थ : गोविन्द अच्युत, अनन्त हमारा मंगल विधान करें। वासुदेव विष्णु हमारा मंगल विधान करें। नर-नरायण, पद्मनाभ, पुरुषोत्तमः, विश्वक्सेन. विश्वेश्वर, हृषीकेश, हरि हमारा मंगलविधान करें। विनतानन्दन हरि (गरुड़) अन्जनानन्दन भागवत हनुमान हमारा मंगल विधान करें। सुमंगलों के एकमात्र विधाता, सभी ईश्वरों के ईश्वर, सच्चिदानन्द विग्रह, महान्, श्रीकृष्ण-हम लोगों का अतिशय मंगल विधान करें। (1)

सब लोकों के ईश्वरों के भी ईश्वर कृष्ण मेरा मंगल करें। लोकपावन कार्णगण (भक्तगण) भी मेरा मंगल करें। (2)

श्री राधा जी के साथ श्री कृष्ण ही सभी

विषयों में मेरा मंगल करें तथा सर्वविघ्नविनाश कारी श्रीकृष्ण के निज जन भी सर्वदा मेरा मंगल करें।

श्रीगुरुदेव, परमगुरुदेव, (परमेष्ठी) परम गुरुजी के गुरुजी, परात्पर गुरुदेव एवं अन्यान्य गुरुवर्गों को प्रणाम करने की क्रमानुसार विधि (जो कि 55 पृष्ठ पर बतलायी गयी है।) से उन सभी को प्रणाम करते हुए प्रार्थना करें। इसके बाद सिंहासन में श्रीभगवान के बायीं ओर 'ऐं गुरुवे नमः', ऐं श्रीपरम-गुरुवे नमः' 'ऐं परमेष्ठिगुरुवे नमः', 'ऐं श्री गुरुपरम्परायै नमः', 'ॐ सर्वगुरुत्तमाय', श्रीकृष्ण चैतन्याय नमः -इन मन्त्रों को उच्चारण करके प्रणाम करें।

भूत शुद्धिः

'नादेवो देवमर्चयेत'। अदेव (जो देवता नहीं है) होकर देवता की पूजा नहीं कर सकते अर्थात प्राकृत भूमिका में में अवस्थित मायाबद्ध जीव कभी भी

अप्राकृत भूमिका में विराजमान मायातीत इष्टदेव की पूजा में समर्थ नहीं हो सकता। इसीलिए 'मैं अयोग्य हूँ श्रीगुरुदेव जी की कृपा से योग्यता लाभ करके अप्राकृत इष्टदेव जी की पूजा कर रहा हूँ,—अर्चनकारी के इस प्रकार के ज्ञान का नाम ही भूत शुद्धि है। विभिन्न सम्प्रदायों में भूत शुद्धि की व्यवस्था भी विभिन्न प्रकार की है। अतएव पूजक अपने-अपने सम्प्रदाय प्रणाली का अनुसरण करें।

भूतशुद्धि का अर्थ इस प्रकार है कि-'मैं जड़ देह मन से अतीत शुद्ध-चिन्मय-आत्मस्वरूप एवं श्री कृष्ण जी की तटस्था शक्ति व जीव शक्ति से परिणत (उत्पन्न) जीव हूँ, अतएव श्री कृष्ण का विभिन्नांश मैं होते हुए भी शुद्ध-बुद्ध (ज्ञान)-मुक्तस्वभाव भगवान का नित्य सेवक हूँ। अर्थात् कृष्ण से भिन्न नहीं हूँ मैं श्रीकृष्ण की शक्ति का अंश अर्थात् नित्य-अधीन दास मात्र हूँ। मैं उनकी कृपा का भिखारी होकर उनके प्रियतम

अन्तरंग सेवक श्रीगुरूदेव जी की नित्य अनुगत भाव से सेवा करने वाला हूँ। मुझे श्री गुरूदेव जी की आज्ञा से ही उनके आनुगत्य में श्री-श्रीगुरु-गौरांग गान्धर्विका गिरिधारी जी की सेवा का सौभाग्य प्राप्त हुआ है-अर्चनकारी अपने हृदय में इस प्रकार चिन्ता और दृढ़ धारणा बनाएं तथा निम्नलिखित मन्त्र का ध्यान तथा पाठ करें।

मन्त्र-

नाहं विप्रो न च नरपतिर्नापि वैश्यौ न शूद्रो नाहं वर्णो न च गृह पतिनों वनस्थो यति र्वा।

किन्तु प्रोद्यग्निखिलपरमानन्दपूर्णामृताब्धे गोपीभर्तुः पदकमलोयोर्दास-दासानुदासः।।

ध्यान मन्त्र-

दिव्यं श्रीहरिमन्दिराढ़्य तिलकं कं ठं सुमालान्वितं वक्षः श्रीहरिनामवर्णसुभग, श्रीखण्डलिप्त पुनः।

पूतं सूक्ष्मं नवाम्बरं विमलतां नित्यं वहन्तिं तनु
धयायेत् श्रीगुरूपाद पद्म निकटे
सेवोत्लुकस्चात्मनय।।

मैं ब्राह्मण नहीं हूँ, क्षत्रिय नहीं हूँ, वैश्य नहीं हूँ, मैं ब्रह्मचारी नहीं हूँ, गृहस्थी भी नहीं हूँ, वानप्रस्थी व सन्यासी भी नहीं है, किन्तु मैं प्रकृष्ट रूप से प्रकटित–निखिल परमानन्द से पूर्ण–अमृत–समुद्र के तुल्य श्रीकृष्ण के दासों के दासों का दास मात्र ही हूँ।

(मस्तक में) श्री हरिमन्दिर समुज्वल दिव्य तिलक है, कण्ठ में सुन्दर–सुन्दरअनेकों मालाएँ सुशोभित हैं तथा श्री हरिनामाक्षर द्वारा सुन्दर और चन्दनलिप्त वक्ष स्थल है तथा मेरे सभी भाव एवं वस्त्र भी पवित्र हैं–ये सब धारण करके मैं सेवा के लिए अत्यन्त उत्साही अवस्था में श्री गुरू पादपद्मों के निकट अवस्थित हूँ–इस प्रकार का ध्यान करें।

गुरु पूजा

"चिन्मय श्रीनवद्वीपधाम के बीच श्रीधाम मायापुर है, वहीं पर श्री योगपीठ में रत्नमंडप में श्री गौरांग महाप्रभु विराजित हैं। उनकी दायीं ओर श्री नित्यानन्द प्रभु बायीं ओर श्रीगदाधर, सामने हाथ जोड़े हुए श्री अद्वैत आचार्य हैं तथा श्रीवास पंडित छत्र धारण किये हुए सिंहासन के सामने खड़े हैं एवं श्री गुरुदेव भी निम्न विधि से बैठे हैं।"—इस प्रकार चिन्तन के साथ श्री गुरुदेव जी का ध्यान करते हुये उन्हें अपनी योग्यता के अनुसार से सोलह, बारह, दस या पंचोपचार से पूजा करे। (चौंसठ उपचार से भी पूजा की विधि है।)

गुरु ध्यान :

प्रातः श्रीमन्नवद्वीपे द्विनेत्रं द्विभुजं गुरुम।
वराभयप्रदं शान्तं स्मरेत् तन्नामपूर्वकम्।।1।।
संसार-दावानल-लीढ़-लोकत्रणाय कारुण्य
घनाघनत्वम्।

प्राप्तस्य कल्याणगुणार्णवस्य वन्देगुरोः

श्रीचरणारविन्दम्।।2।।

निकुन्जयुनो रतिकेलिसिद्धयै या

यालिभियुक्तिरपेक्षणीया।

तत्रदिदक्षादतिबल्लभस्य

वन्दे गुरोः श्री चरणारविन्दम्।।3।।

साक्षाद्धरित्वेन समस्त शास्त्रौरुक्तस्था भाव्यत् एव

सद्भिः।

किन्तु प्रभोर्यः प्रिय एव तस्य वन्दे गुरौः

श्रीचरणारविन्द।।4।।

भावार्थ :

प्रातः काल में श्रीनवद्वीप धाम में विराजमान दो नेत्र, श्रेष्ठ-अभय दान करने वाले, शान्तमूर्ति श्रीगुरुदेव को उनका नाम उच्चारण पूर्वक स्मरण करना चाहिए। (1)

संसार रुप दावानल से तापित-जनमात्र की

रक्षा करने के लिए, दया के भाव को बरसाने में वर्षा के घने मेघों के भाव को प्राप्त होने वाले, कल्याण-गुणनिधि श्रीगुरुदेव के शोभायुक्त चरणारविन्द की मैं वन्दना करता हूँ। (2)

निकुन्ज विहार-परायण श्री राधाकृष्ण रूप-युवक. युगल सरकार की रमणीयक्रिया की सिद्धि के लिए श्री ललिताविशाखा आदि सखियों द्वारा जो-जो युक्ति अपेक्षित है-उस युक्ति में अनन्त चतुरता के कारण अपने इष्ट देव के अतिप्यारे श्री गुरुदेव जी के शोभायुक्त चरणारविन्द की मैं वन्दना करता हूँ। (3)

जिन श्रीगुरुदेव जी के स्वरुप को समस्त शास्त्र श्रीहरि का साक्षात स्वरूप बतलाते हैं तथा सज्जनों के द्वारा जो अनुभव में भी इसी प्रकार से लाया जाता है, किन्तु अपने प्रभु के जो अतिशय प्यारे हैं, उन श्रील गुरुदेव जी के शोभायुक्त चरणारविन्द की मैं वन्दना करता हूँ। (4)

श्रीगुरूदेव जी के ध्यान के बाद कम से कम तीन बार जय कीर्तन करना चाहिए (यथा–जय नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज जी की जय।)

मानस पूजा व अन्तर्वाग

जितनी देर व जितने प्रकार से मन की तृप्ति होती है, उतनी देर व उतने प्रकार से ध्यान व प्रार्थना करके सर्व उपचारों के द्वारा मन से कल्पना करके सबसे पहले मानस पूजा करना कर्तव्य है।

बाह्म उपचारों द्वारा पूजा:

मानस पूजा के बाद अनुगा (अनुमति) लेकर वाह्योपचार से पूजा प्रारम्भ करें।

दीक्षा के समय श्रीगुरुदेव के निकट से प्राप्त श्रीगुरु मन्त्र से गुरुपूजा करनी चाहिए।

श्रीगुरुदेव जी का स्नान :

श्रीगुरुदेव जी को स्नान करने के पवित्र स्थान पर सम्मान के साथ बुलाकर स्नान करा रहा हूँ –इस प्रकार का चिन्तन करते हुए स्नान के पात्र में आसन, पाद्य, आचमन आदि निवेदन करके श्रीगुरूदेवजी को स्नान करवाना चाहिए।

जैस–

"इदम् आसनं ऐ गुरुवे नमः"– इस मन्त्र से स्नान के पात्र में आसन के लिए चन्दन से युक्त पुष्प रखें।

"प्रभो ! कृपया स्वागतं कुरु, ऐं गुरुवे नमः"– इस मन्त्र से श्रीगुरुदेव को आसन में आह्वान करना चाहिए।

"एतत् पाद्यं ऐं गुरुवे नमः"–इस मन्त्र से कुशा घास से स्नान पात्र में गुरुदेव जी के पादपद्म में पानी देना चाहिए।

"इदम् आचमनीयं ऐं गुरुवे नमः" – इस मन्त्र से पानी को विसर्जन पात्र में डाल दें। इसके बाद भावना से गुरुदेव को तेल मर्दन करके–

"इदम् स्नानीयं ऐं गुरुवे नमः" – इस मन्त्र से कर्पूर आदि सुगन्धित वस्तुओं के साथ शंख जल से घन्टा बजाते हुए तथा स्तवादि पाठ करते हुए स्नान कराना चाहिए, अर्थात स्नान भावना के साथ स्नान पात्र में पानी डालें।

स्नान के बाद पतले व सूखे वस्त्र से श्रीअंगों को श्रीमूर्ति या आलेख्व को श्रीगुरू मन्त्र द्वारा पोंछ दें। उसके बाद–

'इदम् सोत्तरीयं वस्त्रं ऐं गुरुवे नमः" — इस मन्त्र से गुरुदेव जी को वस्त्र दिया जा रहा है। ऐसी भावना करके दो पुष्प अथवा दो बार जल विसर्जन पात्र में प्रदान करें।

पंचामृतादि द्वारा सब समय स्नान कराना

उचित नहीं है। किसी विशेष समय में पंचामृतादि द्वारा स्नान करके सुगन्धित शुद्ध जल द्वारा स्नान करना होगा। वासी पानी से स्नान करना मना है।

श्रीचरणामृत-स्नान पात्र का पानी- चरणामृत अच्छी तरह से शुद्ध पात्र में संरक्षण करना चाहिए।

इदमं आचमनीय ऐं गुरुवे नमः" - इस मन्त्र से पहले की तरह पानी डालें।

श्रीमूर्ति का प्रसादन-

इसके बाद श्रीगुरुदेव सिंहासन में आकर बैठे हैं- इस प्रकार भावना से सिंहासन को निर्दिष्ट स्थान में स्थापन करके श्रीमूर्ति के चरण (हृदय में) स्पर्श करते हुए मूर्ति देवता का का मन्त्र (गुरु मन्त्र) का आठ बार जप करना चाहिए। ये ही श्रीमूर्ति का प्रसादन है। श्रीमूर्ति के प्रसादन द्वारा और स्थिर चित्त द्वारा अर्चक की आत्मशुद्धि होती है।

इसके बाद आसन आदि के क्रम द्वारा सभी उपचारों से श्री गुरुदेव की पूजा करें। सामने एक अर्चन पात्र रखकर उसके ऊपर ही अर्चन करें।

"इदम् आसनम् ऐं गुरुवे नमः"– इस मन्त्र से अर्चन पात्र में पुष्प दें।"

"एतत् पाद्यं ऐं गुरुवे नमः"– इस मन्त्र से चम्मच आदि के द्वारा विसर्जनीय पात्र का जल त्याग करें।

"इदम् अर्घ्य ऐं गुरुवे नमः"– इस मन्त्र से अर्घ्य (गन्ध, पुष्प, जल) अर्चन पात्र में दें।

"इदम् आचमनीयं ऐं गुरुवे नमः"– इस मन्त्र से चम्मच के द्वारा विसर्जनीय पात्र में जल त्याग करें।

"एष मधुपर्क ऐं गुरुवे नमः"– मधुपर्क अर्चन पात्र में दें अथवा अन्य पात्र में निवेदन करें।

"इदम् आचमनीयं ऐं गरुवे नमः"– मन्त्र उच्चारण

करते हुए पहले की तरह आचमन करना चाहिए।

"इदम् उपवीतम् ऐं गुरुवे नमः"– इस मन्त्र के द्वारा उपवीत (जनेऊ) प्रदान करें, उपवीत के अभाव में अर्चन पात्र में पुष्प दें।

"इदम् तिलकं ऐं गुरुवे नमः"– इस मन्त्र से पुष्प को चन्दन लगा कर अर्चन पात्र में चन्दन दं एवं श्रीमूर्ति को ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक करें।

"इदम् आचमनीयं ऐं गुरुवे नमः"– पूर्ववत्।

"इदम् आभरणं ऐं गुरूवे नमः"– इस मन्त्र का पाठ करते हुए अर्चन पात्र में पुष्प दें।

"एष गन्ध ऐं गुरुवे नमः"– इस मन्त्र से पुष्प में चन्दन लगाकर अर्चन पात्र में चन्दन दें। श्रीमूर्ति के चरणों में भी दें (दो बार)।

"इदम् सगन्धं पुष्पं ऐं गुरुवे नमः"– इस मन्त्र से

गन्ध युक्त फूल सिंहासन में स्थित श्रीमूर्ति के चरण में दें तथा अर्चन पात्र में भी दें (दो बार)।

"एष धूप ऐं गुरुवे नमः"– इस मन्त्र से विसर्जनीय पात्र में जल त्याग कर।

"एष दीप ऐं गुरूवे नमः"– मन्त्र उच्चारण पूर्वक विसर्जनीय पात्र में जल त्याग करें। इसके बाद पुष्पान्जलि, आसन, पाद्य, आचमन आदि पहले की तरह निवेदन करना चाहिए।

"इदम् नैवेद्यं ऐं गुरुवे नमः"– नैवेद्य पात्र में शंख–जल के साथ तुलसी दें।

"इदम् पानकं ऐं गुरुवे नमः"– पानी को (शर्वत) शंख जल के साथ तुलसी दें।

"इदम् पानीयं ऐं गुरुवे नमः"– इस मन्त्र द्वारा पानीय पात्र में शरवं जल के साथ तुलसी दें।

"इदम् आचमनीयं ऐं गुरुवे नमः" – पूर्ववत्।

आचमन के बाद "देवता को" सिंहासन में चिन्ता करके–

"इदम् ताम्बूलम् ऐं गुरूव नमः" – इस मन्त्र द्वारा ताम्बूल पात्र में शंख-जल और तुलसी दे।

''इदम् माल्यं ऐं गुरूवे नमः" – इस मन्त्र द्वारा श्रीमूर्ति को माला पहना दें। माला के अभाव में पुष्प अर्पण करे।

द्रष्टव्य– श्रीगुरुदेव और वैष्णवगण-आश्रय-विग्रह व शक्ति तत्व हैं। अतएव उनके चरणों में तुलसी अर्पण करना मना है। एक मात्र विषयविग्रह या शक्तिमत्ततत्व (भगवान) के चरणों में ही तुलसी-अर्पण को विधि है। आश्रयविग्रह को नाभि से ऊपर वक्षःस्थल पर या हाथ में तुलसी देना ही विधि है।

इसके बाद यथाशक्ति श्रीगुरु मन्त्र और श्रीगुरु गायत्री का जप करें। जप कम से कम 12 बार होना चाहिए। इसके बाद स्तुति व प्रणाम करना न भूलें।

स्तुतिः -

श्री चैतन्यमनोऽभीष्टं स्थापितं येन भूतले।
स्वयं रूपः कदा मह्मं ददाति स्वपदान्तिकम्।
त्वं गोपिका वृषरवेस्तनयान्तिकेऽसि
सेवाधिकारिणिहि गुरो निजपाद पद्मे।
दास्यं प्रदाय कुरु मां व्रजकानने श्रीराधाङ्घ्रि
सेवनरसे सुखाब्धे।।

प्रणाम मन्त्र -

ॐ अज्ञानतिमिरान्धास्य ज्ञानान्जन-शलाकया।
चक्षुरुन्मिलितं येन तस्मै श्री गुरुवे नमः।।
मूकं करोति वाचालं पंगु लंघयते गिरिम्।
यत् कृपा तमहं वन्दे श्रीगुरुं दीनतारणम्
राधा सम्मुख संसक्तिं सखीसंग निवासिनीम्।

त्वाहं सतत वन्दे माधावाश्रयविग्रहाम्।।

नामश्रेष्ठं मनुमपि शचिपुत्रमत्रस्वरुप

रूप तस्याग्रजमुरुपुरी माथुरी गोष्ठवाट म्।

राधाकुन्डं गिरिवरमहो राधिका माधवाशां

प्राप्तो यस्य प्रथित कृपया श्रीगुरु तं नतोऽस्मि।।

वैष्णव प्रणाम मन्त्रः

वान्छ कल्पतरुभ्यश्च कृपासिन्धुभ्य एव च।

पतितानां पावनेभ्यो वैष्णवेभ्यो नमो नमः।।

स्वात्मार्पण या आत्म सर्मपणः

(आत्मसर्मपण)

अंशो भगवतोऽस्म्यहं सदा दासोऽस्मि सर्वथा।

तत्कृपाप्रेक्षको नित्यं तत्प्रेष्ठसात् करोमि स्वम्।।

मां मदीयन्च सकलं श्री गुरुवे समर्पयामि।।

"इदम् सवं ऐं गुरुवे नमः"— इस मन्त्र द्वारा श्री गुरुदेव जी के चरणों में पुष्प प्रदान करें।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

श्रीचरणामृत ग्रहण– इसके बाद निम्नलिखित श्लोक के उच्चारण एवं भक्ति भाव के साथ-साथ श्री गुरुजी का चरणामृत ग्रहण करें।

स्तुति अर्थ-

जिन्होंने पृथ्वी में श्रीचैतन्य देव जी का आन्तरिक अभीष्ट स्थापन किया, वही स्वयं श्रीरूप गोस्वामी (श्रीरूपानुग श्रेष्ठ श्रीगुरुदेव) कब मुझे अपने पादपद्मों का सानिध्य (निकटता) प्रदान करेंगें। (1)

हे सेवाधिकारिन सेवा प्रदान करने वाले आन्दाम्बुधि गुरुदेव! आप वृषभानु नन्दनी के निकट रहने वाली गोपी हो। आप अपने पादपद्मों का दास्य

प्रदान करके मुझे व्रज के कानन में श्रीराधा जी के पादपद्मों की सेवानन्द से सुखी करें।।2

जिन्होंने ज्ञान के अंजन (सुरमा) युक्त शलाका द्वारा अज्ञान रूपी घोर अन्धकार से अन्धी मेरी आँखों को खोल दिया है, मैं उन्हीं गुरुदेव जी को नमस्कार करता हूँ।{3}

जिनकी कृपा से गूंगा भी वाचाल हो जाता है, लंगड़ा भी पर्वत को पार कर लेता है-उन्हीं दीन लोगों का उद्धार करने वाले श्रीगुरुदेव की मैं वन्दना कर रहा हूँ।

श्रीराधा जी के निकट आसक्त सखियों के साथ अवस्थित माधव जो के आश्रय विग्रह-मैं आपकी (श्रीगुरुदेव की) हमेशा वन्दना करता हूँ।।4

अहो! जिनकी अपार कृपा से इस जगत के

सभी भगवत नामों के बीच श्रेष्ठनाम और मन्त्र, श्रीशचीनन्दन, श्रीस्वरूप श्रीरूप, श्रीरूपाग्रज (श्रीसनातन), विशाल मथुरापुरी, गोष्ठवाटिका, राधाकुण्ड, गोवर्धन-गिरिवर एवं श्रीराधामाधव जी के सेवा की आशा प्राप्त हुई है—मैं उन्हीं गुरुदेव जी के चरणों में प्रणाम करता हूँ।।6

अपने सेवकों की अभिलाषा पूर्ति के लिए कल्पतरु के समान एवं कृपा के सिन्धु स्वरूप तथा पतितों को पावन करने वाले वैष्णवों के लिए हमारा बारम्बार प्रणाम है।।7।।

मैं श्रीकृष्ण का विभिन्नांश हूँ अर्थात श्रीकृष्ण की तटस्था शक्ति का अंश हूँ, इसलिए मैं सर्वदा सब प्रकार से उनका दास हूँ। मैं नित्य उनके (श्रीकृष्ण के) प्रति कृपा प्रार्थी होकर उनके ही अत्यन्त प्रियजन के निकट आत्मसमर्पण कर रहा हूँ।।8

मैं और मेरा सभी श्रीगुरुपाद पद्म में अर्पण कर रहा हूँ। ।9

अनन्त क्लेशों को नाश करने वाले, शुद्ध भक्ति प्रदान करने वाले श्रीगुरु जी के पादोदक का पान करके मैं उसे मस्तक में धारण कर रहा हूँ। {10}

श्री गौरांग पूजा

श्रीगुरुपूजा के बाद श्रीगुरुदेव जी की अनुमति लेकर व उनकी कृपा प्रार्थना करके पंचतत्वात्मक श्रीगौरांग जी का अर्चन करना कर्तव्य है। श्रीगुरुपूजा की तरह अपनी अवस्था स्मरण करते हुए श्रीगौरांग देव जी का ध्यान करते हुए उनका अर्चन करना होगा—

ध्यान मन्त्र—

श्रीमन्मोक्तिकदामबद्धचिकूरं सूस्मेरचन्द्राननं
श्रीखण्डागुरुचारुचित्र वसनं स्त्रग्दिव्यभूषान्चितम्।
नृत्यावेशरसानुमोदमधुरं कन्दर्ण वेशोज्जवलं चैतन्यं
कनकाद्युर्ति निजजनैः संसेव्यमानं भजे।।

जिनका मुख मण्डल मधुर हास्य से युक्त है तथा जिनके प्रफुल्लित मुखमण्डल के चारों ओर काले-काले घुंघराले बाल सुशोभित हैं, जिनके दिव्य शरीर में विचित्र चित्रकारी युक्त वस्त्र हैं, यथायोग्य स्थानों पर चन्दन आदि सुशोभित हैं, सारा शरीर

दिव्य-अलंकारों से विभूषित है, जिनके गले में सुन्दर माला भी सुशोभित है, जिनके मधुर रसानन्द युक्त नृत्यवेश में करोड़ों कामदेवों का सौन्दर्य फीका पड़ जाता है, जो अपने पार्षदों द्वारा संसेवित हैं-उन कनक की तरह कान्ति वाले श्री चैतन्य देव का मैं भजना करता हूँ।

इसके बाद

जय श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द।
श्रीअद्वैतगदाधर श्रीवासादि गौर भक्त वृन्द।।

का तीन बार पाठ करें।

मानस पूजा-

श्रीगुरू पूजा की तरह इस क्षेत्र में भी सोलह-बारह व दस प्रकार के उपचारों द्वारा मानसिक रूप से गौरांग पूजा करने का विधान है।

बाह्य उपचारों द्वारा पूजा-

श्रीगुरुदेव से प्राप्त श्रीगौर मन्त्र से श्रीमूर्ति अथवा श्रो शालग्राम में श्रीगौरांग देव जी की पूजा करने का विधान है।

स्नान–

स्नान के स्थान पर निमन्त्रित कर स्नान करा रहा हूँ–इस प्रकार के मानसिक चिन्तन से स्नान पात्र में आसन–पाद्म–आचमन देकर स्नान कराना होगा।

मन्त्र–

इदम् आसनं क्लीं गौराय नमः–इस मन्त्र से स्नान पात्र में प्रासन के लिए चन्दन युक्त पुष्प–तुलसी या सिर्फ पुष्प रखने चाहिए।

"प्रभो! कृपया स्वागतं कुरू क्लीं गौराय नमः," इस मन्त्र से प्रभु को प्रासन में निमन्त्रित करना चाहिए।

"एतत् पाद्यं क्लीं गौराय नमः"– इस मन्त्र द्वारा

स्नान पात्र में श्री गौर हरि जी के चरणों में जल प्रदान करें।

"इदम् आचमनीयं क्लीं गौराय नमः"– इस मन्त्र द्वारा विसर्जनीय पात्र में जल प्रदान करें।

इसके बाद मानसिक चिन्तन से ही श्री गौर हरि जी के अंगों में सुगन्धित तेल इत्यादि मलें तथा 'इदम् स्नानीयं क्लीं गौराय नमः– कहकर घण्टा बजाते हुए तथा स्तव पाठ करते हुए शंख में सुवासितजल से श्री गौरांग देव जी को स्नान करायें।

स्नान के बाद साफ व सूखे कपड़े से श्रीअगों को साफ करके 'इदम सोत्तरीय वस्त्रं क्लीं गौराय नमः"– मन्त्र से प्रभु को वस्त्रर्पण की भावना से दो फूल या दो बार जल विसर्जन पात्र में डाले।

इदम् आचमनीयं क्लीं गौराय नमः– पूर्ववत्।

श्रीमूर्ति का प्रसादनः

श्रीमन् महाप्रभु सिंहासन में आकर बैठ गये हैं—इस प्रकार की भावना से श्री मूर्ति को सिंहासन के निर्दिष्ट स्थान में विराजमान कर दें तथा श्री मूर्ति के चरणों को स्पर्श करके श्री हृदय में 8 बार जप करना चाहिए। (यदि श्री शालग्राम जी का अर्चन होता हो तो अर्चन पात्र में तुलसी तथा पुष्प देकर शालग्राम को उसके ऊपर स्थापन करना चाहिए।

इसके बाद आसन आदि क्रम से सर्व-उपचारों से पूजा करनी चाहिए । यथा : -

"इदम् आसनं क्लीं गौराय नमः"— इस मन्त्र से अर्चन पात्र में पुष्प व तुलसी अर्पण करें।

"एतत् पाद्मं क्लीं गौराय नमः"— इस मन्त्र से विर्सजन पात्र में जल प्रदान करें।

"इदं अर्घ्यं क्लीं गौराय नमः"— इस मन्त्र से अर्चन

पात्र में अर्घ्य (गन्ध-पुष्प-तुलसी और जल) प्रदान करें।

"इदं आचमनीयं क्लीं गौराय नमः" – पूर्ववत् ।

''एष मधुपर्कः क्लीं गौराय नमः– इस मन्त्र से उपवीत अपंण करें। (उपवीत के अभाव में उपवीत की भावना से अर्चन पात्र में पुष्प प्रदान कर सकते हैं।

"इदम् तिलकं क्लीं गौराय नमः"– इस मन्त्र से श्रीमूर्ति के श्रीमस्तक पर ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक की रचना करें तथा अचेन पात्र में तुलसी के पत्ते से चन्दन इत्यादि दें।

''इदम् आचमनीयं क्लीं गौराय नमः"– पूर्ववत।

''इदम आमरणं कलीं गौराय नमः"– इस मन्त्र द्वारा अर्चन पात्र में पुष्प अर्पण करें।

“एष गन्धः कलीं गौराय नमः”– इस मन्त्र से तुलसी पत्र द्वारा अर्चन पात्र में चन्दन एवं श्रीमूर्ति के श्रीचरणों में चन्दन का लेपन करना चाहिए। (दो बार)

“इदं सगन्धं पुष्पं क्लीं गौराय नमः”– इस मन्त्र द्वारा श्रीमूर्ति के चरणों में व अर्चन पात्र में चन्दनयुक्त पुष्प प्रदान करें (दो बार)

“इदम् सगन्धं तुलसी पत्र क्ली गौराय नमः”– इस मन्त्र से श्री मूर्ति के चरणों में व अर्चन पात्र में चन्दनयुक्त तुलसी के पत्ते प्रदान करें। (दो बार)

“एष घूप कलीं गौराय नमः”– इस मन्त्र द्वारा विसर्जनोय पात्र में जल प्रदान करें।

“एष दीपः कलीं गौराय नमः”– इस मन्त्र से विसर्जन पात्र में जल प्रदान करें, इसके बाद पुष्पान्जलि, आसन, पाद्य, तथा आचमन आदि को पहले की तरह

निवेदन करना चाहिए।

"इदं नैवेद्यं क्लीं गौराय नमः"– इस मन्त्र से नैवेद्य पात्र में शंखजल के साथ तुलसी प्रदान करनी चाहिए।

''इदं पानकं क्लीं गौराय नमः"– इस मन्त्र से पानक को शंख जल के साथ तुलसी प्रदान करें।

''इदं पानीयं क्लीं गौराय नमः"– जल पात्र में जल अर्पण करें।

"इदं आचमनीयं क्लीं गौराय नमः"– पूर्ववत्।

आचमन के बाद श्री गौरांग देव जी सिहासन में बैठे हैं इस प्रकार की चिन्तन करके–

"इदं ताम्बूलं क्लीं गौय नमः"– ताम्बूल अभाव में पुष्प अर्पण करें।

''इदं माल्यं क्लीं गौराय नमः"– इस मन्त्र द्वारा श्री

मूर्ति को माला प्रदान करें। (माला के आभाव में माला के मानसिक चिन्तन के साथ-साथ पुष्प प्रदान करें) इसके बाद यथा शक्ति (कम से कम 12 बार) श्री गौर मन्त्र-श्री गौर गायित्री का जप करना चाहिए।

तत्पश्चात श्री गौरांग देव जी की स्तुति व उनको प्रणाम करना चाहिए।

स्तुति-

ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्टदोहं
तीर्थास्पदं शिवविरिन्चिनूत शरण्यं।
भृत्यार्तिहं प्रणतपाल भवाब्धिपोतं
वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम् ।।1।।
त्यक्तवा सुदुस्त्यज्य-सुरेप्सित-राज्यलक्ष्मीं
धर्मिष्ठ आर्यवचसा यदगादरण्यम्।
मायामगं दयितयेप्सितयन्वधावद्
वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम्।।2।।
पचतत्वात्मकं कृष्णं भक्त रूप स्वरूपकम्।

भक्तावतारं भक्ताख्य नमामि

भक्तशक्तिकम्।।3।।

प्रणामः

नमो वेदान्तवेद्याय कृष्णाय परमात्मने

सर्वचैतन्यरूपाय चैतन्याय नमो नमः।।4।।

आनन्दलीलामय विग्रहाय हेमाभदिव्यच्छविसुन्दराय।

तस्मै महाप्रेम रस प्रदाय चैतन्य चन्द्राय नमो

नमस्ते।।5।।

नमो महावदन्याय कृष्ण प्रेम प्रदाय ते।

कृष्णाय कृष्णचैतन्य नाम्ने गौरत्विषे नमः।।

अर्थ– हे शरणागतों के रक्षाकर्ता! हे महापुरुष! आप सबके ध्यान करने योग्य हो, पाप माया दुःखों से छुटकारा दिलाने वाले हो, आप अभीष्ट आशा को पूर्ण करने वाले हो, आप सब तीर्थों के आधार हैं, आप ब्रह्मा, शिवादि के पूजित एवं उनके भी पाश्रय स्वरूप हो, आप उनके सेवकों के दुःखों को हरण

रूपी समुद्र से पार कराने वाले करने वाले हो तथा भव संसार रूपी समुद्र से पार करने वालम हो। मैं आपके पादपद्मों की बन्दना करता हूँ।1।

हे महाप्रभु! आप धार्मिक लोगों में श्रेष्ठ हो, इसीलिए आपने आर्य ब्राह्मणों के शाप की रक्षा के लिए अत्यन्त दुस्त्यज्य श्रीलक्ष्मी-स्वरूपिणी अपनी पत्नी विष्णुप्रिया देवी को परित्याग करके सन्यास ग्रहण किया (जिसकी विद्यमानता की देवता लोग भी सदैव अभिलाषा करते हैं) तथा परम दयालु होने के कारण आपने माया के पीछे दौड़ने वाले संसारासक्त जीवों के घर-घर जाकर उनका उद्धार किया। मैं आपके चरण कमलों की वन्दना करता हूँ।2।

भक्तरूप (श्रीचैतन्य), भक्त स्वरूप (श्रीनित्यानन्द) भक्तावतार (श्री अद्वत) भक्त (श्रीवासादि) और भक्त शक्ति (श्रीगदाधार आदि)-इन पंचतत्वात्मक श्रीकृष्ण को मैं प्रणाम करता हूँ।3।

वेदान्तवेद्य, श्रीकृष्ण, परमात्मा सर्वचैतन्य-स्वरूप-श्रीचैतन्य, देवजी को मैं बार-बार नमस्कार करता हूँ।4।

आनन्दलीलामय देहधारी स्वर्णकान्ति की तरह पलौकिक सुन्दर कान्ति वाले, महाप्रेस-रसदाता-श्रीचैतन्य चन्द्र को मैं बार-बार नमस्कार करता हूँ।।5।।

महावदान्य, कृष्ण प्रेम प्रदाता, गौरकान्ति, श्रीकृष्ण चौतन्य नामधारी श्रीकृष्ण को मैं नमस्कार करता हूँ।6।

आत्मार्पण या आत्म समर्पण-

अंशो भगवतोऽस्म्यहं सदा दासोऽस्मि सर्वथा।
तत्कृपाप्रेक्षको नित्यं गोराय स्वं समपये।।
मां मदीयन्च कल श्रीगौराय समर्पयामि।

'इदं सर्वं क्लीं गौराय नमः'- इसके बाद श्रीमूर्ति के

चरणों में पुष्प प्रदान करें तथा कीर्तन करें।

ॐ तत्सत् ॐ

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

श्रीचरणामृत ग्रहण–इसके बाद भक्ति भाव पूर्वक व निम्नलिखित श्लोक उच्चारण के साथ श्रीगौरचरणामृत ग्रहण करें –

अशेष–क्लेशनिःशेषकारणं शुद्धभक्तिदम्।
गौरपादोदकं पीत्वा शिरसा धारयाभ्यहम्।

भावार्थ–अशेष क्लेश को समाप्त कर देने वाले, शुद्ध भक्ति को प्रदान करने वाले–श्रीगौरांग–पदोदक को पीकर मैं उसे मस्तक पर धारण करता हूँ।

श्री श्रीराधा-कृष्ण जी की पूजा

श्री-श्रीगरू-गौरांग जी की कृपा प्रार्थना करते हुए एव श्री गुरुदेव ही श्रीराधाकृष्ण जी की साक्षात् रूप से सेवा कर रहे हैं, क्योंकि वे श्री श्रीराधा कृष्ण जी के प्रियतम जन हैं – मैं अत्यन्त अज्ञ एवं भगवत् सेवा में असमर्थ जीव हूँ-इस प्रकार की चिन्ता करते हुए श्री गुरुदेव जी के आनुगत्य में श्री श्रीराधा कृष्ण जी का अर्चन करना चाहिए।

श्रीवृन्दावन का ध्यान :

ततो वृन्दावनं ध्यायेत् परमानन्दवर्धनम्।
कालिन्दी जल कल्लोलसंडी-मारुत सेवितम्।।
नानापुष्प लताबद्ध वृक्षपण्डेश्च मण्डितम्।
कोटिसूर्यसमामासं विमुक्तं षट्तरंगकः।
तन्मध्ये रत्नखचितं स्वर्ण सिंहासनं मा त्।।

रत्न-सिंहासन पर विराजमान श्री-श्रीराधाकृष्ण जी का ध्यान

दीव्यद्वृन्दारण्यकल्पद्रुमाधः श्रीमद्रत्नागार सिंहासनस्थौ।
श्रीश्रीराधा-श्रीलगोविन्ददेवौ, प्रष्ठालीभिः सेव्यमानो
स्मरामि।।

श्रीराधा जी की प्रीति के लिए श्रीकृष्ण जी का ध्यान

सत्पुण्डरीकनयनं मेघाभं वैद्य ताम्बरम्।
द्विभुजं वेणुवक्त्रब्ज वनमालिनमीश्वरम्।।
दिव्याल कारणोपेतं सखिभिः परिवेष्टितम्।
चिदानन्दघनं कृष्णं राधार्लिंगितविग्रहम्।।

वृन्दावन का ध्यान-

श्लोक-अर्थ–परमानन्द को बढ़ाने वाला, यमुना के जल कल्लोल के संस्पर्श से शीतल पवन द्वारा सेवित, नाना प्रकार के पुष्प-लताओं द्वारा लिपटे हुए वृक्षों द्वारा सुशोभित, करोड़ों सूर्यों के समान

समुज्जवल, षड़विध-तरंगरहित श्रीवृन्दावन का तथा वहां पर विराजमान रत्नों से जड़े हुए विशाल स्वर्ण-सिंहासन का ध्यान करें।

रत्न सिंहासन पर विराजित श्री श्रीराधाकृष्ण जी का ध्यानः :

श्लोक-अर्थ-उज्जवल शोभाशाली वृन्दावन में कल्पवृक्ष के नीचे में सुन्दर रत्नमन्डित सिंहासन पर अधिष्ठित प्रियतम सखियों के द्वारा सेवित श्री श्रीराधा गोविन्द जी को मैं स्मरण करता।

राधा जी की प्रीति के लिए श्रीकृष्ण जी का ध्यान-

श्लोक अर्थ-विशाल सुन्दर, सोने के सिंहासन पर विराजित कमलनेत्र, मेघकान्ति, पीताम्बर, द्विभुज, मुरलीवदन, वनमाला धारी, दिव्यालंकारों से सुशोभित तथा सखीगण द्वारा परिवेष्ठित एवं श्रीराधाजी द्वारा आलिंगित-चिदानन्द

देह वाले भगवान श्रीकृष्ण का मैं ध्यान करता हूँ। (1-2)

श्री-श्रीगान्धारविका गिरिधारी जी का कम से कम तीन बार जपगान करें।

जयगान के बाद सर्वप्रथम सोलह, बारह तथा दस उपचारों से श्री-श्रीराधा कृष्ण जी का मानस अर्चन करें तथा उसके बाद बाह्योपचार द्वारा पूजा की जाएगी।

बाह्योपचार द्वारा पूजा :

श्री गुरुदेव जी से प्राप्त अष्टादश-अक्षर कृष्ण मन्त्र पार *श्रीराधा पूजा मन्त्र व गायत्री से श्रीमूर्ति में अथवा शालग्राम में श्रीराधा कृष्ण जी का अर्चना करना कर्तव्य है,

श्रीराधा पूजा मन्त्र - "रां राधावै स्वाहा"
गायत्री - "रां राधिकायै विद्महे प्रेमरुपाय धीमहि,

तन्नो राधा प्रचोदयात्।"

स्नानः -

श्रीराधा-कृष्ण जी को स्नान पात्र में आहवाहन करके उन्हें स्नान करा रहा हूँ-इस प्रकार की भावना युक्त हो कर स्नान पात्र में आसन आदि देकर स्नान कराना चाहिए। जैसे :

"इदं आसनं श्रीं क्ली राधाकृष्णभ्यां नमः"- इस मन्त्र द्वारा स्नान पात्र में चत्दन से युक्त तुलसी-पुष्पप्रदान करें।

कृपया स्वागतम् कुरुतदेवौ :

"श्रीं क्ली राधाकृष्णाभ्यां नमः"- इस मन्त्र से श्री राधाकृष्ण जो को आसन पर आहवान करना चाहिए।

"एतत् पाद्यं श्रीं क्लीं राधाष्णाभ्यां नमः"—इस मन्त्र से स्नान पात्र में श्री श्रीराधा-कृष्ण जी के पाद पद्मों

में जल प्रदान करें।

“इदं अचमनियं कलीं राधाकृष्णभ्यं नमः”– विसर्जन पात्र में अर्पण करें।

इसके बाद पवित्र भावना द्वारा श्रीराधा–कृष्ण जी के अंगों में सुगन्धित तेल आदि देकर “इदम् स्तानीयं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः” मन्त्र उच्चारण करें घण्टा बजाते हुए तथा स्तव पाठ करते हुए श्री राधाकृष्ण जी को शंख जल से स्नान करायें।

स्नान के बाद सूखे साफ कपड़े से अंग साफ करें:

“इमे सोत्तरीये वस्त्रे श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः” –इस मन्त्र से मैं श्रीराधा जी को वस्त्र दे रहा हूँ, इस प्रकार को पवित्र भावना करते हुए दो पुष्प या दो बार जल विसर्जन पात्र में डालें।

"इदं आचमनीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः"–श्री गुरू पूजा व गौरांग पूजा को विधि के अनुसार ही आचमन कराना होगा।

श्रीमूर्ति का प्रसादन–

श्री श्रीराधाकृष्ण जी के स्नानादि के पश्चात प्रभु सिंहासन में स्थित निर्दिष्ट प्रासन पर विराजित हो गये हैं, इस प्रकार को भावना से श्रीमूर्ति के चरण (हृदय में) स्पर्श करके मूल मन्त्र और श्रीराधा मन्त्र का आठ बार जप करें; श्रीशालग्राम में अर्चन करने के बाद अर्चन पात्र में तुलसी–पुष्प देकर उसके ऊपर श्रीशालग्राम स्थापन करें।

आसन आदि कम से सोलह प्रकार की पूजा–

"इदं आसनं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः"–इस मन्त्र द्वारा अर्चन पात्र में पुष्प व तुलसी प्रदान करें।

"एतत् पाद्मं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः"–इस

मन्त्र से विसर्जन पात्र में दो बार जल प्रदान करें।

"इदं अर्घ्य श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः"– इस मन्त्र से अर्चन पात्र में गन्ध-पुष्प-तुलसी तथा जल प्रदान करें।

'इदं आचमनीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यो नमः" पूर्ववत्।

'एष मधुपर्कः श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः' -इस मन्त्र से मधुपर्क पात्र में शख-जल व तुलसी प्रदान करें।

'इवं आचमनीय श्रीं क्ली राधाकृष्णाभ्यां नम.'– पूर्ववत्।

'इदं उपवीतं क्लीं कृणाय नमः'– इस मन्त्र से श्रीकृष्ण को उपवीत प्रदान करें, उपवीत के अभाव में अर्चन पात्र में पुष्प प्रदान करें।

‘इदं तिलकं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः– इस मन्त्र से श्रीमूर्ति में ऊर्ध्वपुण्ड्र की रचना करनी होगी तथा तुलसी–पत्र से चन्दन लगाकर अर्चन पात्र में अर्पण करना होगा।

‘इदं आचमनीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णान्यां नमः– पूर्ववत।

‘इमानि आभरणानि श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः– अर्चन पात्र में पुष्प प्रदान करें।

“एष गन्धः श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः’– इस मन्त्र से तुलसी के दो पत्तों में चन्दन लगाकर अर्चन पात्र में प्रदान करें व श्री मुर्ति के चरणों में चन्दन का लेपन करें।

‘इदं सगन्धं पुष्तं श्रीं क्लीं राधाकृणाभ्यां नमः’– श्रीमूर्ति के चरणों में व अर्चन पात्र में कम से कम दो बार चन्दन एवं पुष्प प्रदान करें।

‘इदं सगन्धं तुलसी पत्रं क्लीं कृष्णाय नमः’— इस मन्त्र के द्वारा श्रीकृष्ण जी के चरणों में और अर्चन पात्र में कम से कम दो बार चन्दन युक्त तुलसी प्रदान करें।

‘एष धूपः श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः’— इस मन्त्र द्वारा विसर्जनीय पात्र में जल प्रदान करें।

‘एष दीपः श्रीं क्लीं राधाकृणाभ्यां नमः’— इस मन्त्र से विसर्जनीय पात्र में जल प्रदान करें। इसके बाद पुष्पांजली, आसन, पाद्य व आचमन निवेदन करते हुए—

“इदं नैवेद्य श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः”— उक्त मन्त्र द्वारा नवेद्य पात्र में शरव-जल और तुलसी प्रदान करें।

“इदं पानकं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः’— इस मन्त्र से पानक पात्र में शंख-जल और तुलसी प्रदान

करें।

“इदं पानीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाय नमः”– इस मन्त्र से पानीय पात्र में शंख जल व तुलसी प्रदान करें।

“इवं आचमनीयं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः”– {पूर्ववत्} आचमन के बाद श्री-श्रीराधाकृष्ण सिंहासन में विराजित हैं, ऐसी भावना करके– “इदम् ताम्बूलं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः”– इस मन्त्र से तान्बूल पात्र में शख जल व तुलसी प्रदान करें।

“इमे माल्ये श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः– इस मन्त्र द्वारा श्रीमृति को माला पहनाएँ; माला के अभाव में अर्चन पात्र में पुष्प प्रदान करें। इसके बाद यथाशक्ति {कम से कम 12 बार} मूल मन्त्र, काम गायत्री, राधामन्त्र, राधा गायत्री जप करके स्तुति व प्रणाम करना आवश्यक है।

श्री कृष्ण स्तुति :

{ॐ} नमो विश्वस्वरूपाय विश्वस्थित्यम्तहेतवे।
विश्वेश्वराय विश्वाय गोविन्दाय नमो नमः।।
नमो विज्ञान रूपाय परमानन्दरूपिणे।
कृष्णाय गोपीनाथाय गोविन्दाय नमो नमः।।
नम कमलनेत्राय नमः कमलमालिने।
नमः कमलनाभाय कमलापतये नमः।।
वर्हापीड़ाभिरामाय रामायाकुण्ठमेधसे।
रमा-मानस-हंसाय गोविन्दाय नमो नमः।।
कसवशविनाशाय केशिचाणूरघातिने।
वृषभध्वजवन्द्याय पार्थ सार्थये नमः।।
वेणुणाद विनोदाय गोपालायाहिमदिने।
कलिन्दीकूललोलाय लोलकुण्डलधारिणे।।
बल्लवीबदनाम्भोजमालिने नृत्यशालिन।
नमः प्रणतपालाय श्रीकृष्णाय नमो नमः ।।
नमः पापप्रणाशाय गोवर्धनधराय च।
पूतनाजीवितान्ताय तृणावर्त्तासुहारिणे।।
निष्कलाय विमोहाय शुद्धायाशुद्धावैरिणे।
अद्वितीयाय महते श्रीकृष्णाय नमो नमः।।

प्रसोद् परमानन्द प्रसीद परमेश्वर।
आधिव्याधिभुजंगेन दृष्टं मामुद्धर प्रभो।।
श्रीकृष्ण रूक्मिणीकान्त गोपीजन मनोहर।
संसार-सागरे मग्नं मामुद्धर जगद्गुरो।।
केशवक्लेशहरण नारायण जनार्द्धन।
गोविन्द परमानन्द मां समुद्धर माधव।।

प्रणामः –

हे कृष्ण ! करुणा सिन्धो ! दीनबन्धो !
जगतपते ! ।
गोपेश ! गोपिकाकान्त ! राधाकान्त !
नमोऽस्तुते।।

श्री कृष्ण स्तुति :–

विश्व स्वरूप, विश्व की स्थिति व नाश के हेतु, विश्वेश्वर, समस्त विश्व में व्याप्त श्री गोविन्द जी को मैं बार-बार नमस्कार करता हूँ।

विज्ञानरूपी, परमानन्द रूपी गोपीनाथ, गोपाल-श्रीकृष्ण को मैं बार-बार नमस्कार करता हूँ।

कमलनेत्र, कमलमाली, कमलनाभ-कमलापति को मैं नमस्कार करता हूँ।

शिखिपुच्छ से जिनका चूड़ा सुशोभित है, जो असीम बुद्धि से से युक्त हैं, जो लक्ष्मीजी के मानस सरोवर में हंस की तरह विहार करते हैं तथा जो गऊओं का पालन करते हैं, उस कृष्ण को मेरा नमस्कार है।

कंस-वंश-धवंसकारी, केशी-वाणूरघाती, वृषभध्वज के पूज्य श्रीपार्थसार्थी को मेरा नमस्कार है।

वेणुनाद-विनोदी, कालीयमर्दनकारी, कालिन्दीकूल के प्रति लोलुप, चंचल कुण्डलधारी, गोपीमुख-कमलमाली, नृत्यपरायण तथा शरणागतों

का पालन करने वाले गोपाल–श्रीकृष्ण को मेरा बार–बार नमस्कार है।

पाप विनाशन, श्रीगोवर्धनधारी, पूतना जीवन–घाती तथा तृणावर्त नामक असुर के प्राणों को हरण करने वाले श्रीकृष्ण को मेरा प्रणाम है।

निष्फल, मोहनाशक, जिनका विग्रह विशुद्ध सत्वमय है, जो पापीजनों के वैरी–अद्वितीय व महान हैं उन श्रीकृष्ण को मैं बार–बार नमस्कार करता हूँ।

हे परमानन्द हे परमेश्वर ! पाप प्रसन्न होइए। हे प्रभो ! आधि–व्याधि रूप सर्प द्वारा दशित–मुझ जीव का उद्धार करें। हे कृष्ण ! हे गोपीजन मनोहर ! हे रुक्मिणी–कान्त ! जगद्गुरो ! मेरा उद्धार करें– कारण, मैं संसार रूपी सागर में पड़ा हुआ हूँ।

हे केशव ! हे क्लेश हारिन ! हे नारायण !

हे जनार्द्धान ! राधा प्रिय ! हे माधव ! हे गोविन्द ! – मेरा उद्धार करें।

प्रणाम मन्त्र का अर्थ–

हे करुणासिन्धु, दीनबन्धु जगत्पते, गोपेश, गोपिका कान्त–हे राधाकान्त–हे कृष्ण ! आपको मेरा नमस्कार है।

श्रीराधा स्तुति–

राधा रासेश्वरी रम्या रामा च परमात्मनः।
रासोद्भ्वा कृष्णकान्ता कृष्णवक्षःस्थलस्थिता।।
कृष्ण प्राणाधिदेवी च महाविष्णोः प्रसूरपि।
सर्वाद्या विष्णुमाया च सत्या नित्या सनातनी।।
ब्रह्मस्वरूपा परमा निर्लिप्ता निर्गुणा परा
वृन्दा वृन्दावने त्वं च विरजा तट वासिनी।।
गोलोकवासिनी गोपी गोपिका गोपमातका।
सानन्दा परमानन्दा नन्दनन्दनकामिनी।

वृषभानुसुता शान्ता कान्ता पूर्णतमा तथा।
काम्या कलावती कन्यातीर्थपूता सती शुभा।।
संसार सागरे घोरे भीत मां शरणागतं।
सर्वेभ्योऽपि विनिर्मुक्तं कुरु राधे सुरेश्वरी।।
त्वत्पादपद्मयुगले पादपदालयार्चिते।
देहि मह्यं परां भक्ति कृष्णेन परिसेविते।।

प्रणाम–

तप्तकान्चन गौरांगी ! राधो ! वृन्दावनेश्वरी !
वृषमानुसुते ! देवि ! प्रणमामि हरिप्रिये !।।

महामावस्वरूपे त्वं कृष्णप्रिया वरीयसि।
प्रमभक्ति प्रदे देवि राधिके त्वां नमाम्यहम्।।

श्रीराधा स्तव का अर्थ–

आप {श्रीराधा जी} महारास लीला में प्रमुख रूप से रमण करने वाली हैं, आप परमात्मा श्रीकृष्ण को आनन्द प्रदान करने वाली हैं, आप आनन्द की

जननी हैं । आप श्रीकृष्ण के वक्ष स्थल में रहने वाली हैं, आप श्रीकृष्ण जी के प्राणों की अधिष्ठात्री देवी हैं, आप महाविष्णु को प्रसव करने वाली हो, सर्वाद्या शक्ति हो, नित्य हो, सनातनी हो, ब्रह्म स्वरूपिणी हो, आप परशक्ति हो, निर्लिप्ता हो, त्रिगुणों मे अतीत हो, परा-वृन्दावन में वन्दा हो, आप विरजातट वासिनी व गोलोकवासिनी हो, आप गोपी हो व गोपियों में श्रेष्ठा हो एवं गोपियों की मूल स्वरूपा हो। आप आनन्दमयी हो व परमानन्दा हो। आप नन्दनन्दन की कामिनी हो, वृषभानु राजा की कन्या हो। शान्ता हो कमनीया हो, पूर्णतमा हो, काम्या हो, कलावती हो, कन्या तीर्थ की पवित्रताविधात्री हो सती हो, शुभा हो- हे सुरेश्वरी राधे ! घोर संसार सागर में पतित मुझ शरणागत को सभी भयो से मुक्त करो। आप ब्रह्मा एवं लक्ष्मी जी द्वारा अर्चित हैं। आप श्रीकृष्ण जी द्वारा सेवित हैं- आप मुझे अपने पादपद्मों में पराभक्ति प्रदान करें।

प्रणाम मन्त्र का अर्थ-

हे तपाये हुए सोने के समान गौर-कान्ति वाली! हे वन्दावनेश्वरी ! हे वृषभानुनन्दिनी ! हे हरिप्रिये ! हे देवी ! श्रीमतिराधिके ! आपको मैं बारम्बार प्रणाम करता हूँ।

इसके बाद श्रीकृष्ण को निवेदित कुछ पुष्प व तुलसी श्री राधा जी के हाथ में दें।

स्वात्मार्पण या आत्म समर्पण

अंशो भगवतोऽस्म्यहं सदा दासोऽस्मि सर्वथा।
श्रीराधिका कृपापेक्षी स्वात्मानमर्पयाम्यहम्।।
मा मदीयन्च सकलं श्री श्री राधाकृष्णाभ्यां
समर्पयामि।

'इदं सर्वं श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः' – इस मन्त्र के द्वारा श्री मूर्ति के चरणों में पुष्प और जल प्रदान करें।

मैं भगवान का अंश हूँ। मैं सर्वदा सर्वतो भाव से उनका ही सेवक एवं श्रीराधिका जी का कृपापेक्षी हूँ। मैं श्री श्री राधाकृष्ण जी के चरणों में अपने आप को समर्पण करता हूँ।

मैं अपने आप को और मेरा जो कुछ भी है—उस सभी को श्री श्रीराधाकृष्ण जी के चरणों में अर्पण करता हूँ।

तथा इसके बाद पद्मपंचक पाठ करें

संसार सागरान्नाथ पुत्रमित्रगृहांगनात्।
गौप्तारौ मे युवामेव प्रपन्नभयभन्जनौ।।
योऽहं ममास्ति यत्किन्चित् इहलोके परत्र च।
तत्सर्व भवतोऽद्धव चरणेषु समर्पितम्।।
अहमप्योपराधानामालयस्त्यक्तसाधनः।
अगतिश्च ततो नाथौ भवन्तौ मे परागतिः।।
तवास्मि राधिकानाथ कर्मणा मनसा गिरा।
कृष्ण कान्ते तवैवास्मि युवामेव गतिर्मम।।

शरणं वां प्रपन्नोऽस्मि करुणानिकराकरौ।
प्रसादं कुरु दास्यं भो मयि दुस्तेऽपराधिनि।।

इसके बाद विज्ञप्तिपंचक पाठ करें–

मत्समो नास्ति पापात्मा नापराधी च कष्चन्।
परिहारेऽपि लज्जा मे किं वे पुरुषोत्तम।।
युवतीनां यथा युनि युनान्च युवतौ यथा।
मनोऽभिरमते तद्वत् मनो मे रमतां त्वयि।।
भूमौ स्खलित पादानां भूमिरेवावलम्बनम्।
त्वयी जातापराधानां त्वमेव शरणं प्रभो।।
गोविन्द वल्लभे राधे प्रार्थये त्वामहं सदा।
त्वदीयमिति जानातु गोविन्दो मां त्वया सह।।
राधे वृन्दावनाधीशे करुणामृतवाहिनी।
कृपया निजपादाब्जदास्यं मह्यप्रदीयताम।।

हे नाथ ! हे शरणागत-भय-भंजन, आप दोनों ही संसार सागर और पुत्र मित्र पूर्ण गृहांगन से मेरी रक्षा करने वाले हैं। इस लोक में व परलोक में मैं और मेरा कहकर जो कुछ है वह सभी {अभी}

आपके चरणों में समर्पण करता हूँ। मैं सभी अपराधों का भण्डार हूँ। मैं साधनहीन और दुर्गति प्राप्त जीव हूँ। अतएव आप दोनों ही मेरे प्रभु व परमगति हैं। हे राधिकानाथ ! मैं शरीर से मन से और वाक्य से आपका ही हूँ आप दोनों ही मेरी गति हैं। आप करुणा के आधार हो। मैं आप दोनों की ही शरण लेता हूँ। आप इस अपराधी दुष्ट जन को कृपा पूर्वक अपनी दासता प्रदान करें।

'हे पुरुषोत्तम ! मेरे समान पापी और अपराधी और कोई नहीं है इसलिए आपसे क्षमा चाहते हुए भी मुझे लज्जा हो रही है। मैं और क्या कहूँ युवतियों का मन नवयुवक में एवं युवकों का मन नवयुवतियों में जिस प्रकार रत होता है,

मेरा मन भी आप में उसी प्रकार रत हो जाये। जिसका चरण भूमि में फिसल जाय तो भूमि

ही उसका अवलम्बन होती है, उसी प्रकार आपके चरणों में अपराधियों के आप ही आश्रय।

हे गोविन्द-प्रिया राधिके ! मैं आपके पास हमेशा प्रार्थना करता हूँ कि आप और गोविन्द मुझे अपना समझ कर जानें। हे वृन्दावनेश्वरी ! हे करुणामृतवाहिनी राधे ! आप कृपा करके मुझे अपने पादपद्मों का दासत्व प्रदान करें।

श्रीपुरुष सूक्त मन्त्र द्वारा भगवत् पूजा विधि

1. ॐ सहस्त्रशीर्षा पुरुषः सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात्।
स भूर्मि विश्वतो वृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशांग लम्।।
इति आसनम्।

2. ॐ पुरुष एवेदं सर्व यद्भ तं यच्च भाव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।
इति स्वागतम्।

3. ॐ एतावानस्य महिमाऽतो ज्यायांश्च पूरुषः।

पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्या मृतं दिवि।।
इति पाद्यम्।

4. ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत पुरुषः पादोऽस्योहाभवत्पुनः।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत् साशनाऽनशने अभि।।
इति अर्घ्यम्।।

5. ॐ तस्मात विराड़जायत विराजो अधिपुरुषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिमथो पुरः।।
इति आचमनीयं।।

6. ॐ तस्मात् यज्ञात् सर्वहुतः संभृतं पृषदाज्यम्।
पशूंस्तांश्चक्रे वायव्यान् आरण्या ग्राम्याश्च ये।।
इति मधुपकः।।

7. ॐ तस्मात् यज्ञात् सर्व्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्मात् यजुस्तस्माद् अजायत।।
इति स्नानम्।।

8. ॐ तस्माद् अश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः।

गावो ह जज्ञिरे तस्मात् तस्मात् जाता अजा वयः।।

इति वस्त्रम्।।

9. ॐ तं यज्ञं वर्हिषि प्रोक्षन् पुरुषं जातमग्रतः।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये।।
इति यज्ञसूत्रम्।।

10. ॐ यत् पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मूखं किमस्यासीत् किं बाहू किमूरू-पादा उच्यते।।
इति अलकारः।।

11. ॐ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासोद् बाहूराजन्यः प्रासनतः।
ऊरू तदस्य यद् वैश्यः पद्भयां शूद्रो अजायत।।
इति गन्धः।।

12. ॐ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्योऽजायत।
श्रोत्रद् वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत।
इति पुष्पम्।।

13. ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीष्णो द्यौः समवर्तत।

पद्भयां भूमिर्दिशः श्रोत्रत्तथा लोकाँ प्रकल्पयन्।।
इति धूपः।।

14. ॐ यत् पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्बत।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म ईधमः शरद् हविः।।
इति दीपः।।

15. ॐ सप्तस्यासन परिधायस्त्रिः सप्तसमिधः कृताः।
देवा यद् यज्ञ तन्वाना अवधन्न् पुरुष पशुम्।।
इति नैवेद्यम्।।

16. ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्यासन्।
ये ह नाकं महिमानः सचन्तः यत्र पूर्व्वेसाध्याः सन्ति देवाः।।
इति नमस्कारः।।

शुक्ल यजुर्वेद-संहिता के 31वें अध्याय के महीधर भाष्य का हिन्दी अनुवाद-

{इन सोलह मन्त्रों के ऋषि, नारायण हैं, परमात्मा-देवता हैं। पहले पन्द्रह श्लोकों में अनुष्टुभ् छन्द है। सोलहवे मन्त्र का छन्द त्रिष्टुभ् है। इनका विनियोग अर्थात लक्ष्य मोक्ष होता है।

पूर्व अधयाय के अन्त में ब्राह्मण इत्यादि सभी कहे गये हैं– इनके अवयवी पुरुष परमात्मा हैं, जिनकी इस अध्याय में स्तुति की गयी है। श्रीमद् भागवत् में इन्हें ही हिरण्यगर्भ के अन्तर्यामी गर्भोदकशायी-द्वितीय पुरुषावतार कहा गया है। इनके स्तवकारी ब्रह्मा जी हैं तथा इस स्तुति के प्रत्येक के मन्त्र को 'कण्डिका' कहते हैं।

श्लोकों के अर्थ–

इस पुरुष के सहस्त्र मस्तक, सहस्त्र नेत्र तथा सहस्त्र पद, हैं {यहाँ सहस्त्र का अर्थ अनन्त है} इस पुरुष के सभी मस्तक अवयवों के उपलक्षण, नेत्र ज्ञानेन्द्रियों के तथा , पद सभी

कर्मेन्द्रियों के उपलक्षण हैं। वह पुरुष ब्रह्माण्ड-लोक-रूपा भूमि तिर्यक {रेंगकर चलने वाले सर्प इत्यादि प्राणी} ऊध्व और अधः में व्याप्त होकर अथवा पंचभूत में व्याप्त होकर अथवा दस उंगली परिमित देश {स्थान} को अतिक्रम करके सर्वत्र व्याप्त होकर अवस्थित हैं। नाभि से दस उंगली अतिक्रम करके हृदय में स्थित हैं। {1}

वर्तमान जगत् अतीत जगत् व भविष्यत् जगत्-ये सब पुरुष ही हैं अर्थात उससे पृथक नहीं हैं। जिस प्रकार इस कल्प में सभी प्राणी विराट पुरुष के अवयव ही हैं; उस प्रकार अतीत एवं भविष्यत् कल्प में भी जानना होगा। वह पुरुष अमृत-तत्व का स्वामी है, जिसलिए प्राणियों के भोग्य अन्न {कर्मफल} के निमित्त अपनी कारणावस्था को अतिक्रम करके परिद्ष्यमान जगत् को प्राप्त हो रहा है। ब्रह्मादि पर्यन्त सभी जीव, जो अन्न पर निर्भर हैं, परम पुरुष उन सब के स्वामी हैं, क्योंकि अन्न से ही

सभी की स्थिति है। {2}

अतीत, भविष्यत् और वर्तमान काल से सम्बन्ध युक्त होने के कारण, सभी उस पुरुष की विभूति है। इतना होने पर भी वह पुरुष इस जगत् से विल्कुल परे है। सभी प्राणी उस पुरुष की एकपाद विभूति हैं अर्थात चतुर्थ अंश हैं, जबकि उस पुरुष की बाकी त्रिपाद जगत् विभूति विनाश रहित है जो कि ज्योति की तरह स्वयं प्रकाश स्वरूप में अवस्थान कर रही है।

श्रीमद्भागवत् {2-6-19} में इस ईश्वर से सम्बन्धित त्रिपाद-अमृत {नित्य सुख} ऊपर के लोकों में विद्यमान है, जो कि इस त्रिलोकी {स्वर्ग, मृत्युलोक व पाताल} में नहीं है। यहाँ पर त्रिपाद शब्द सुख की त्रिविधता प्रदर्शन करते हैं। तीनों लोकों का मस्तक महर्लोक, तथा उससे भी ऊपर जो

त्रिलोक {जन,तप व सत्यलोक} स्थित हैं, उस त्रिलोक में क्रमानुसार अमृत, क्षेम तथा अभय निहित हैं। जन लोक में अमृत {अविनाशी} सुख होने की वजह से वहाँ जीवन पर्यन्त स्व-स्व स्थान परित्याग नहीं होता, परन्तु प्रलय काल में संकर्षण के मुह से निकली अग्नि के द्वारा जब त्रिलोक दग्ध होता है तब उसके ताप से भृगु-आदि महार्षि लोग पीड़ित होकर जनलोक में गमन करते हैं, सो वहाँ पर भी अक्षेम देखा जाता है। किन्तु तपलोक में क्षेम ही होता है तथा सत्यलोक में अभय {मोक्ष} है क्योंकि वह मोक्ष धाम के निकट है {ब्रह्म-लोक सत्य लोक के निकट है}। {3}

त्रिपाद पुरुष संसार से परे हैं। वे यहाँ के {माया दोषों से रहित हैं व उत्कर्ष अवस्था में अवस्थित हैं। इन के जगत्-रूप-पाद से जीव माया से मोहित होकर बार-बार सृष्टि व संहार के द्वारा भटकते रहते हैं। माया में फंसने के बाद

देव-तिर्यक-आदि के रूप में व्याप्त होते हैं। अशन-आदि व्यवहार युक्त चेतन प्राणी एवं अशनादि रहित अचेतन प्राणियों में स्वयं विविध रूप से व्याप्त हैं। श्रीमद् भागवत् {2-6-21} में जीव {विष्वक्} साशन और अनशन {भोग व अपवर्ग के साधन} रूपी दो पथों में चलता है, एक तो अविद्या-कर्मरूपा साधना तथा दूसरी विद्या मुक्ति की साधना-उपासना रूपा है। {4}

उस आदि पुरुष से {भूत, इन्द्रिय, गुणमय विराट} ब्रह्माण्ड देह उत्पन्न हुआ। उसी विराट शरीर को अधिकरण करके देहाभिमानी एक पुरुष उत्पन्न हुआ। वही विराट पुरुष अतिरिक्त देवतिर्यक मनुष्य रूप में परिणित हुआ। इसके बाद देवादि तथा जीवों के रहने के लिए भूमि की सृष्टि की गयी। भूमि सृष्टि के बाद उन्हीं जीवों के शरीरों की सृष्टि की गयी। {5}

जिसमें सभी प्रकार का हवन किया जा सकता है, इसी सर्वहुत् पुरुष मेघ नामक यज्ञ से पुरुष द्वारा दधिमिश्र आज्य {घी} अर्थात दधि आज्य प्रभृति भोग्य समूह सम्पादित हुआ। वह पुरुष वायु जिनके देवता हैं उन्होंने ही पशुओं को उत्पन्न किया। वे पशु जंगल में रहने वाले हिरन इत्यादि व गांवों में व रहने वाले गाय घोड़े इत्यादि हैं। {6}

उस सर्वहुत् यज्ञ से, ऋक् साम, यजुः, गायत्री आदि सभी छन्द उत्पन्न हुए। इनसे भिन्न यज्ञ सिद्ध नहीं होते। {7}

उस यज्ञ से सभी अश्व, अश्वाभिन्न गधो तथा उर्ध्व व अधः दोनों भागों में दंत युक्त पशु उत्पन्न हुए। उसी यज्ञ से गाय, अज और भेड़ उत्पन्न हुई, कारण पशुओं के बगैर यज्ञ सिद्ध नहीं होता। {8}

वही यज्ञ अर्थात यज्ञ के साधनभूत सृष्टि से

पूर्व पुरुष रूप में उत्पन्न, उस उस पुरुष को पशुत्व की भावना करते हुए यूपकाष्ठ में बाँधकर मानस यज्ञ में प्रोक्षण आदि के द्वारा शुद्ध किया गया। उस पुरुष पशु के द्वारा देवता लोगों ने मानस यज्ञ सम्पूर्ण किया। वे देवता सृष्टि के लिए साधन योग्य साधयगण और मन्त्र दृष्टा ऋषि लोग होते हैं। {9}

प्रजापति के प्राणरूप देवता लोगों ने जिस समय पुरुष को उत्पन्न किया, उस समय न जाने कितनी ही प्रकार कि कल्पनाए की गयीं? इस पुरुष का मुख कौन हुआ? दोनों बाहु व दोनों जांघे कौन हुआ? दोनों पद कौन हुआ? {10}

ब्राह्मण अथ त ब्रह्मत्व जाति विशिष्ट पुरुष–इस प्रजापति के मरव से उत्पन्न हुए। क्षत्रिय जाति विशिष्ट पुरुष बाहु से निकले। उसी समय इस प्रजापति की दोनों जांघों से वैश्य जाति सम्पादित हुई व चरणों से शूद्र जाति उत्पन्न हुई। {11}

उस पुरुष के मन से चन्द्रमा, चक्षुओं से सूर्य, कर्ण से वायु और प्राण तथा मुख से अग्नि उत्पन्न हुई। {12}

जिस प्रकार प्रजापति के मन से चन्द्र आदि देवताओं की कल्पना की गई, उसी प्रकार अन्तरिक्ष के लोकों की कल्पना की गई। {13}

प्रजापतियों के नाभिकमल मे सभी अन्तरिक्ष, मस्तक से स्वर्ग, दोनों चरणों से भूमि, कर्णो से दिशाए उत्पन्न हुई। पहले कही गई विधि के अनुसार फल प्रदान करने में उत्सुक सभी काल में प्रजापति से भू-प्रवृत्ति लोकों की कल्पना की गयी।

जिस समय पहले कहे गये क्रमानुसार देवों के शरीर प्रकट हुए थे तो देवता लोगों मे, परवर्ती सृष्टि करने के लिए बाह्य द्रव्य उत्पन्न न होने से, पुरुष स्वरूप को ही मन-मन में हवि {यज्ञ} रूप से संकल्प करके पुरुष नामक हवि के द्वारा मानस यज्ञ

किया था, उस समय वसन्त ऋतु को ही इस यज्ञ में घी रूप से संकल्प किया गया, ग्रीष्म को लकड़ी रूप से, शरद को पुरोडास इत्यादि हवन के द्रव्य रूप से कल्पना किया गया। {14}

जिस समय प्रजापति के प्राण व इन्द्रिय रूपी देवताओं ने मानस यज्ञ के लिए पुरुष पशु का बन्धन किया अर्थात विराट पुरुष को ही पशु रूप से भावना को, इसी अभिप्राय से चौदहवें श्लोक में "यत् पुरुषेण हविषा" इस प्रकार बताया गया है। उसी समय आदित्य के साथ गायत्री प्रादि सातों छन्द-संकल्पित यज्ञ के {परिधि} प्रतिनिधि बने। बारह महीने, पांच ऋतु तीनों लोक और सूर्य इन कुल इक्कीस की यज्ञ-काष्ठ रूप से भावना की गई अथवा क्षीरोध-आदि सातों समुद्र परिधि हुए। भारत वर्ष में यज्ञ होते रहते हैं, इसलिए समुद्रों को परिधित्व कहा गया। गायत्री आदि सप्त अतिजगति आदि सप्त एवं कृति प्रभृति सप्त ये ही इक्कीस छन्द समिधा हैं। {15}

विस्तार रूप से दिये गए यज्ञ को संक्षेप में कहते हैं {प्रजापति को प्राणरूप देवता लोगों ने} जैसा कि कहा गया है, मानस संकल्प रूप यज्ञ के द्वारा यज्ञस्वरूप प्रजापति की पूजा की। उस पूजा से जगत् रूप कार्य समूह के धारक मुख्य भूत समूह हुआ। यहां तक सृष्टि के प्रतिपादक भाग का अर्थ प्रस्तुत किया गया।

अब उपासना और उसके फल के अनुवादक भाग के अर्थ का संक्षेप दिया जाता है। जिस विराट प्राप्ति रूप स्वर्ग में पुरातन विराट उपाधि रूप साधक लोग अवस्थान कर रहे हैं, वही विराट प्राप्ति रूप स्वर्ग ही उनका स्थान है जिसे महात्मा लोग प्राप्त होते हैं। इस के द्वारा सृष्टि प्रवाह की नित्यता प्रदर्शन कर रहे हैं। {16}

इति पुरुषः सूक्तानुवादकः।

उपांग पूजा

वेणु, माला, श्रीवत्स एवं कौस्तुभ की पूजा—जैसे:

'एते गन्ध पुष्पे ॐ श्रीमुखवेणवे नमः।।'
'एते गन्ध पुष्पे ॐ वक्षसि वन मालायै नमः।'
'एते गन्ध पुष्पे ॐ दक्षस्तनोदर्ध्वे श्रीवत्साय नमः।'
'एते गन्ध पुष्पे ॐ सव्यस्तनोदर्ध्वे कौस्तुभाय नमः।।'

इसके बाद श्रीगुरु-वैष्णवों को श्रीगुरु-श्रीराधाकृष्ण जी का चरणामृत एवं निर्माल्य प्रदान करें।

'इदं श्रीराधाकृष्ण चरणामृतं ऐं गुरुवे नमः'—

इस मन्त्र द्वारा श्रीराधाकृष्ण जी के चरणामृत को अर्चन पात्र में देना चाहिए।

'इदं प्रसाद निर्माल्यं ऐं गुरुवे नमः– श्रीमूर्ति के हाथ में।

इसके बाद श्री श्रीराधाकृष्ण जी के चरणामृत को निम्नलिखित श्लोक का उच्चारण करते हुए सेवन करना चाहिए तथा सिर पर धारण करना चाहिए।

श्रीराधाकृष्ण पादोदक प्रेम भक्तिदं मुदा।
भवितभरेण वै पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम्।।

दोहपर में 12 बजे के मध्य ही भोग एवं आरती सम्पन्न करना उचित है। श्रीकृष्ण, {या श्री श्रीराधाकृष्ण} श्रीगौरांग महाप्रभु और श्रीगुरुदेव-सभी को अलग-अलग थाली में भोग लगाना चाहिए। कम से कम श्रीकृष्ण और श्रीगौरांग जी के लिए दो थाली में भोग तो लगाना ही चाहिए। हाँ, यदि कोई बहुत ही असमर्थ हो तो वह एक थाली में भोग लगा सकता है।

भगवान जी का मुकुट, वंशी इत्यादि खोलकर भोग निवेदन करना चाहिए तथा थाली के प्रत्येक भोग द्रव्य के ऊपर तुलसी अवश्य देनी चाहिए। यदि श्रीकृष्ण जी को अलग से भोग निवेदन किया गया हो तो श्रीकृष्ण को आचमन इत्यादि देने के बाद उनका {श्रीकृष्ण का} प्रसाद सबसे पहले श्रीराधा जी को निवेदन करना चाहिए।

श्रीगुरुदेव ही भोग निवेदन कर रहे हैं, इस प्रकार की भावना रखना उचित है।

'एषः पुष्पांजलि क्लीं कृष्णाय नमः' –

'इदं आसनं क्लीं कृष्णाय नम.' – इस मन्त्र द्वारा आसन पर पहले की तरह पुष्पादि अपर्ण करने चाहिए।

'एतत् पाद्यं क्लीं कृष्णाय नमः – इस मन्त्र से विसर्जन पात्र में जल प्रदान करना चाहिए।

'इदं आचमनीयं क्लीं कृष्णाय नमः– इस मन्त्र ने विसर्जन पात्र में जल प्रदान करना चाहिए।

'इदं अन्न–व्यंजन–पानीयादिकं सर्वं क्लीं कृष्णाय नमः'

उपरोक्त मन्त्र उच्चारण एवं घन्टाध्वनि के साथ–साथ प्रत्येक द्रव्य में तुलसी पत्र युक्त शंख जल निवेदन करना चाहिए।

अथवा इदं अन्नं क्लीं कृष्णाय नमः तथा इदं व्यजनं, इद दुग्धं, इदं पानीयं इत्यादि–इस प्रकार के मंत्रों द्वारा अलग–अलग निवेदन किया जा सकता है।

अथवा 'एषः पुष्पांजलि श्रीं क्लीं राधाकृष्णाभ्यां नमः इत्यादि–मन्त्र के द्वारा श्रीराधाकृष्ण जी को एकत्र भी निवेदन किया जाता है।

समस्त द्रव्य निवेदन के बाद गर्भ-मन्दिर से बाहर आकर श्रीकृष्ण के भोजन काल तक प्रतीक्षा करनी चाहिए। इतनी देर भोग आरती कीर्तन करना कर्त्तव्य है।

श्रीभोग आरती

भज भक्तवत्सल श्री गौरहरि।
श्रीगौरहरि-सोहि गोष्ठविहारी, नन्द-यशोमति चित्तहारी।।
बेला ह'लो, दामोदर, आइस एरवन।
भोगमन्दिरे बसि, करह भोजन।।
नन्देर निदेशे बैसे गिरवरधारी।
बलदेव-सह सरवा बैसे सारि सारि।।
शुकता-शाकादि भाजि नालिता कुष्माण्ड।
डालि डालना दुग्धतुंबी दधि मोचारवण्ड।।
मुद्गबड़ा माषबड़ा रोटिका घृतान्न।
शष्कुली पिष्टक क्षीर पुलि पायसान्न।
कर्पूर अमृतकेलि रंभा क्षीरसार।

अमत रसाला अम्ल द्वादश प्रकार।।
लुचि चिनि सरपुरी लाड्डु रसावली।
भोजन करेन कृष्ण हये कुतूहली।।
राधिकार पक्व अन्न विविध व्यन्जन।
परम आनन्दे कृष्ण करेन भोजन।।
छलेबले लाड्डु खाए श्रीमधुमंगल।
बगल बजाए आर देय हरिबोल।।
राधिाकादि गणे हेरि' नयनेर कोणे।
तृप्त ह'ये खाय कृष्ण यशोदा-भवने।।

यहां तक भोग-प्रारती कीर्तन करने के बाद मन्दिर में जाकर आचमनीय तथा ताम्बूल पहले बताई गई विधि के अनुसार निवेदन करना चाहिए एवं बाहर आकर फिर आगे का कीर्तन करें जो कि इस प्रकार है-

भोजनान्ते पिए कृष्ण सुवासित वारि।
सबे मुख प्रक्षालय ह'ये सारि सारि।।

हस्त मुख प्रक्षालिया यत सखीगणे।
आनन्दे विश्राम करे बलदेव-सने।।
जांबुल रसाल आने ताम्बूल मसाला।
ताहा खे'ये कृष्णचन्द्र सुखे निद्रा गेला।।
विशालाक्ष शिखि-पुच्छ-चामर ढुलाय।
अपूर्व शय्याय कृष्ण सुखे निद्रा याय।।

इसके बाद पिछले अध्याय में कहे गए नियमानुसार 'श्री राधिकाय नमः' मन्त्र द्वारा श्रीराधा जी को निवेदन करने के बाद बाहर आकर पुनः कीर्तन करें-

{नोट :-यदि श्रीराधा-कृष्ण जी को एक ही थाली में भोग निवेदन किया गया हो तो इसकी आवश्यकता नहीं है।}

यशोमती-आज्ञा पे'ये धनिष्ठा-आनित।
श्रीकृष्ण प्रसाद राधा भुजे ह'ये प्रीत।।

बाद में श्रीगुरुदेव, सभी सखियों, सभी वैष्णवों, श्रीपौर्णमासी, सभी ब्रजवासियों को वही प्रसाद निवेदन करते हुए बाहर आकर आगे का कीर्तन करें—

ललितादि सखीगण अवशेष पाय।
मने–मने सुखे राधाकृष्ण गुण गाय।।
हरि–लीला एकमात्र याहार प्रमोद।
भोगारति गाय सेइ भक्तिविनोद।।

श्री श्रीराधा–कृष्ण जी का प्रसाद श्रीगुरुदेव, सर्व–सखियां इत्यादि को क्रम से निम्न प्रणाली द्वारा निवेदन किया जाता है।

निवेदन प्रणाली—

'इदं महाप्रसाद नैवेद्यं ऐ गुरुवे नमः'— इस मन्त्र से श्रीगुरुदेव जी के नैवेद्य पात्र में जल प्रदान करें।

'इदं पानीयं ऐं गुरुवे नमः'– इस मन्त्र से गुरुदेव हेतु भावना द्वारा पीने के पानी की बजाय पुष्प या जल अर्चन पात्र में प्रदान करें।

'इदं आचमनीयं ऐं गुरुवे नमः'– पहले की तरह।

'इवं प्रसाद ताम्बूलं ऐं गुरुवे नमः'– इस मन्त्र द्वारा ताम्बूल की भावना करके पुष्प या जल गुरुदेव जो के नैवेद्य पात्र में प्रदान करें।

'इदं श्रीकृष्ण चरणामृतं ॐ सर्वसखीभ्यो नमः'– इस मन्त्र द्वारा श्रीकृष्ण का चरणामृत सब सखियों को देने की भावना से पृथक पात्र में रखें।

'इदं प्रसाद निर्माल्यं ॐ सर्वसखीभ्यो नमः– उपरोक्त विधानानुसार। –

'इदं महाप्रसाद नैवेद्यं ॐ सर्वसखीभ्यो नमः'– उपरोक्त विधानानुसार।

‘इदं पानीयं ॐ सर्वसखीभ्यो नमः’– उपरोक्त विधानानुसार।

‘इदं आचमनीयं ॐ सर्वसखीभ्यो नमः’– इस मन्त्र द्वारा आचमनीय जल विसर्जन पात्र में डालें।

‘इदं प्रसाद-ताम्बूल ॐ सर्वसखीभ्यो नमः’– इस मन्त्र द्वारा ताम्बूल की भावना से पुष्प या जल एक पृथक पात्र में डालें।

इस प्रकार सभी वैष्णवों, पौर्णमासी तथा ब्रजवासियों को एक-एक करके निवेदन करना चाहिए, अथवा। निम्न प्रकार मन्त्र उच्चारण करते हुए सभी को एक साथ निवेदन भी कर सकते हैं। जैसे

‘इदं सर्वं ॐ सर्वसखीभ्यो नमः।’
‘इदं सर्वं ॐ श्रीपौर्णमास्यै नमः।’
‘इदं सर्वं ॐ सर्वव्रजवासिभ्यो नमः।’

'इदं सर्वं ॐ सर्ववैष्णवेभ्यो नमः।'

श्रीगुरुदेव, श्रीगौरांग, श्री श्रीराधाकृष्ण जी को अलग-अलग करके अर्थात तीन थाली में भोग लगाने से भोग सर्वप्रथम श्रीकृष्ण {या श्रीराधाकृष्ण} जी को फिर श्रीगौरांग महाप्रभु जी को और उनके बाद श्री गुरुदेव जी को निवेदन करना चाहिए। भोग निवेदन करने के पश्चात अर्चनकारी को चाहिए कि वह मन्दिर से बाहर आकर उनके भोजन काल की भोग आरती कीर्तन करते हुए प्रतीक्षा करता रहे। दो थाली भोग लगाने पर श्री गौरांग महाप्रभु जी का प्रसाद क्रमानुसार श्रीगुरुदेव और सभी वैष्णवों को निवेदन करना चाहिए।

भोग लगाने के बाद आरती

भोग लगाने के बाद भगवान के श्रीविग्रहों को चूड़ा पहना कर नीराजन करें। {नीराजन मूलमन्त्र के द्वारा आरती द्रव्यों का संस्कार करना}

श्री श्रीराधाकृष्ण, श्री श्रीगौरांग और श्री श्रीगुरुदेव जी को उनके अपने-अपने मन्त्रों द्वारा अलग-अलग तीन बार पुष्पांजलि देनी चाहिए। नीराजन आरती कीर्तन, विभिन्न प्रकार के वाद्य, घण्टा धवनि, स्तव स्तुति व नाम कीर्तन के द्वारा करना कर्त्तव्य है। नीराजन का प्रत्येक द्रव्य मूलमन्त्र के द्वारा श्रीकृष्ण जी को निवेदन करके आरती करनी चाहिए तथा क्रमानुसार 1-धूप, 2-दीप, 3-जल से भरे शंख, 4-वस्त्र, 5-पुष्प तथा 6-चामर इत्यादि के द्वारा निर्मञ्छन {घुमाना} करना चाहिए तथा सबसे अन्त में शंख ध्वनि के साथ प्रारती समाप्त होनी चाहिए।

शयन मन्त्र-

'आगच्छ शयन स्थानं त्रियाभिः सह केशव।
दिव्यपुष्पाट्यशय्यायां सुख विहर माधव।।

इस मन्त्र के द्वारा श्रीभगवान को शयन कराना चाहिए तथा इसके बाद क्रमानुसार सुवासित

जल, कर्पूर के सहित ताम्बूल, माल्य, अनुलेपन तथा पुष्पान्जलि–नियमानुसार निवेदन करके, दण्डवत् प्रणाम करने के बाद मन्दिर के दरवाजे बन्द कर देने चाहिए। ये बात ध्यान में रहे कि हमेशा उत्तम पुष्पों द्वारा अन्जलि देनी चाहिए।

तुलसी सेवा

प्रार्थना

निर्मिता त्व पुरा देवैः अर्चिता त्वं सुरासुरैः।
तुलसी हर मेऽविद्यां पूजां गृह्ण नमोऽस्तु ते।।

स्नान मन्त्र–

{ॐ} गोविन्द बल्लभां देवीं भक्तचैतन्यकारिणीम्।
स्नापयामि जगद्धात्री कृष्णभक्तिप्रदायिनीम्।।

अर्घ्य मन्त्र–

श्रियः श्रिये श्रियावासे नित्यं श्रीधरं सत्कृते।
भक्त्या दत्त मया देवि अयं गह्ण नमोऽस्तु ते।।

पूजा मन्त्र–

निर्माल्य–गन्ध–पुष्पादि पानीयजलं ॐ तुलस्यै नमः।
एते गन्धपुष्पे ॐ तुलस्यै नमः।।
इदं श्रीकृष्णचरणामृत ॐ तुलस्यै नमः।।

इदं महाप्रसादनिर्माल्यादिक सवं ॐ तुलस्यै नमः।।
इदं आचमनीयं ॐ तुलस्यै नमः।।

प्रणाम –

ॐ वृन्दायै तुलसीदेव्यै प्रियाय केशवस्य च।
कृष्ण भक्तिप्रदे देवि सत्यवत्यै नमो नमः।।

*स्तुति –

महाप्रसाद जननी सर्वसौभाग्यवर्द्धिनी।
आधिव्याधिहरा नित्यं तुलसी त्वं नमोऽस्तु ते।।

हे तुलसी देवी ! देवताओं ने पहले ही आपके तत्व को निश्चय किया है। देवता और असुर आपका अर्चन करते हैं। आप मेरी अविद्या हरण करें, मेरी पूजा ग्रहण करें। मैं आपको नमस्कार करता है।"

महाप्रसाद सम्मान–

श्रीमहाप्रसाद को सबसे पहले नमस्कार करें, जयध्वनि दें, प्रसाद की महिमा कीर्तन करें तथा

उसके बाद भगवान का नाम संकीर्तन करते-करते महाप्रसाद का सेवन करना चाहिए। महाप्रसाद ग्रहण करने के बाद मुख शुद्धि के लिए भगवान का ताम्बूल इत्यादि ग्रहण नहीं करना चाहिए।

महाप्रसाद सम्मान-कालीन कीर्तन।

**नैवेद्यं जगदीशस्य अन्नपानादिकङ्च यत।
भक्ष्याभक्ष्यविचारश्च नास्ति तद्भक्षणे द्विजाः।।
ब्रह्मवन्निर्विकारं हि यथा विष्णस्तथैव तत्।
विकार ये प्रकुर्वन्ति भक्षणे तद्विजातयः।
कुष्ठव्याधिसमायुकनाः पुत्रदारविर्ज्जिताः।
निरय यान्ति ते विप्रास्तस्मान्नावतते पुनः।।
{विष्णुपुराण}

हे द्विजगण! अन्न-जल इत्यादि जो नैवेद्य श्रीकृष्ण को निवेदित हो चुके हों-उन्हें पाने में भक्ष्य-अभक्ष्य का विचार नहीं करना चाहिए क्योंकि वह {भगवत्-प्रसाद} ब्रह्म की तरह निर्विकार अर्थात

जड़विकार रहित होता है। विष्णु जिस प्रकार से पूज्य होते हैं, उनका प्रसाद भी उसी प्रकार से पूज्य होता है। जो द्विज उस प्रसाद को खाने में किसी प्रकार के विकार की कल्पना करते हैं–वे कुष्ट रोग से पीड़ित होते हैं, स्त्री एवं पुत्रों द्वारा परित्याग कर दिये जाते हैं तथा मरने के बाद नरक में जाते हैं।

''महाप्रसादे गोविन्द नाम ब्रह्मणि वैष्णवे।
स्वल्पपुण्यवतां राजन् विश्वासो नैव जायते।।
शरीर अविद्या जाल, जडेन्द्रिय ताहे काल,
जीवे फेले वषय–सागरे।
तार मध्ये जिह्वा अति, लोभमय सुदुर्मति
ता'के जेता कठिन संसारे।।
कृष्ण बड़ दयामय करिबारे जिह्वा जय
स्व–प्रसाद अन्न दिला भाई।
सेइ अन्नामृत पायो राधाकृष्ण गुण गाओ,
प्रेमे डाक चैतन्य–निताइ।।

एकदिन शान्तिपूरे, प्रभु अद्वैतेर घरे ,
दुइ प्रभु भोजने बसिल।
शाक करि प्रास्वादन, प्रभ बले भक्तगण,
एइ शाक कृष्ण प्रास्वादिल।।
हेन शाक प्रास्वादने, कृष्ण प्रेम आइसे मने,
सेइ प्रेमे कर आस्वादन।
जड़ बुद्धि परिहरि, प्रसाद भोजनकरि,
हरि हरि बल सर्वजन।।

शचीर अंगने कभु, माधवेन्द्र पुरी प्रभु
प्रसादान्न करेन भोजन।
खाइते खाइते तार, आइल प्रेम सुदुर्वार,
बले-शुन सन्यासीर गण।।
मोचाघण्ट फुलवाड़ी डालि डालना चच्चड़ि,
शची माता करिल रन्धन।
तार शुद्धा भक्ति हेरि, भोजन करल हरि,
सुधा सम ए अन्न व्यन्जन।।

योग योगी पायि याहा, भोगे आजि हबे ताहा
हरि बलि खाओ सबे भाई।
कृष्णेर प्रसाद-अन्न, त्रिजगत् करे धन्य,
त्रिपुरार नाचे याहा पाई।।

श्रीचैतन्य नित्यानन्द, श्रीवासादि भक्तवृन्द
गौरीदास पण्डितेर घरे।
लूचि चिनि क्षीर सार, मिठाई पायस पार,
पिठापाना आस्वादन करे।।
महाप्रभु भक्तगणे परम-आनन्द-मने,
आज्ञा दिल करिते भोजन।
कृष्णेर प्रसदि-अन्न, भोजने हइया धन्य,
कृष्ण बलि डाके सर्वजन।।
श्रील भक्तिविनोद ठाकुर-कृत 'गीतावली'

"प्रभु कहे–"एइ ये दिला कृष्णधरीमृत।
ब्रह्मादि–दुर्लभ एइ निन्दये अमृत।।
कृष्णेर ये भक्त–शेष, तार फला' नाम।
तार ऐक लवे ये पाये, मेई भाग्यवान।।
सामान्य भाग्य हैते तार प्राप्ति नाहि हय।
कृष्णेर या'ते पूर्ण कृपा, सेइ ताहा पाय।

"श्रीचैतन्य चरितामृत"

स्वाध्याय– भोजन के पश्चात आपस में परमार्थ के विषयों में कथा आलोचना व भक्तिशास्त्रों का अनुशीलन करना कर्तव्य है। हरिकथा श्रवण–कीर्तन को छोड़कर साधन भजन में उन्नति नहीं होती।

अपरान्ह–कृत्य–

श्रीभगवान को जगाने के बाद सुगन्धित शीतल जल तथा कुछ भोग निवेदन करना चाहिए {गर्मी के मौसम में पंखा इत्यादि भी करना चाहिए}।

इसके बाद श्रीभगवान को सुन्दर वस्त्र व अलंकारों से सुसज्जित करना चाहिए। तत्पश्चात मन्दिर का द्वार खोलना चाहिए।

सन्धया कालीन कृत्य–

सन्धया के समय अपने-अपने सम्प्रदाय के अनुसार यथाविधि सन्ध्या-वन्दनादि करते हुए, भक्ति के साथ श्रीभगवान का अर्चनादि अर्थात सन्ध्या-आरती इत्यादि करना कर्तव्य है। सांयकालीन भारती दोपहर को भोग-भारती की तरह ही करनी चाहिए।

रात्रि कृत्य–

रात के एक प्रहर के अन्दर ही श्री कृष्ण का भोग तथा शयन आरती समाप्त करके श्रीकृष्ण को शयन देना चाहिए। इसके बाद श्रीमहाप्रसाद-ग्रहण करना चाहिए तथा अधिक से अधिक नाम-जप

कीतन एवं विश्राम करना चाहिए।

पंचमत शोधन मन्त्र एवं प्रयोगविधि

श्रीजन्माष्टमी, श्रीफाल्गुनी-पूर्णिमादि विशेष-विशेष तिथियों को श्रीविग्रहों को या श्रीशालग्राम को पंचामृत से स्नान कराने से पूर्व प्रत्येक द्रव्य को निम्नलिखित मन्त्र से शोधन करना चाहिए।

दुग्धा- ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरीक्षे पयोधाः पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम। अनेन पयसा स्नापयामि।

दधि- दधि क्राव्न अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः
सुरभिनो मुखाकरत प्रण आयुषितारिषत्त्।
अनेन दन्धास्नापयामि।

घृत- ॐ घृतं घृतपावानः पिवत बसां वसा पावानः पिवतान्तरीक्षस्य हविरसि स्वाहा दिशः प्रदिश आदिशो विदिश उद्दिशोदिगभ्यः स्वाहा।

अनेन हविषा स्नापयामि।

मधु– ॐ मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः माधवीर्नः सन्त्वोषधीः मधुनक्तमूतोषसो मधुमत् पार्थिव रजः मधु द्योरस्तु नः पिता मधुमान् नो वनस्पतिः मधुमानस्तु सूर्यः माधवीर्गावो भवन्तु नः ॐ मधु ॐ मधु ॐ मधु। अनेन मधुना स्नापयामि।

चीनी– ॐ अपां रसं उद्वयसं मूर्ये सन्तं समाहितं अपां रसस्य यो रसस्तं वो गृह्णामि उत्तममुपयाम गृहतोहसीन्द्राय त्वा जुष्टं गहन्म्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् अनया शर्करया स्ना पयामि। एकत्रे अनेन पचामृतेन स्नापयामि।

समाप्त।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

श्रीलगुरुदेव